फीजी का ऐतिहासिक दर्शन

हरनाथ

फीजी का ऐतिहासिक दर्शन

हरनाथ

Har Nath

Vicas Press
Lautoka

Published by Vicas Press,
P O Box 7580,
Lautoka.
Phone: 665 2595
Fax: 665 2596

Printed in Fiji
Cover design: InfoTech
Word-processing, Layout, Design: Pac.Ed

First published 2004

© All rights reserved. No part of this book may be reproduced, stored in a retrieval system, or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording, or otherwise without the prior permission of the publisher.

USP Library Cataloguing-in-Publication Data

Nath Har
Fiji ka etihasik darshan / Har Nath. – Lautoka, Fiji : Vicas Press, 2004.

p. ; cm.

ISBN 982-9082-03-2

1. Fiji--History 2. Sugar workers--Fiji--History I. Title.

DU600.F5H27 2004 996.11

विषय सूची

लेखक का परिचय	....	iv
प्रकाशक के दो शब्द	....	v
धन्यवाद के शब्द	....	vi
१ फीजी द्वीप	....	१
२ हिन्दुस्तानियों का आगमन	....	४
३ फीजी में गन्ने की व्यवसाय	....	६
४ मज़दूरों का आना	....	८
५ हिन्दुओं के लिए कुटी और स्कूल	....	२२
६ गिरमिट विरोध	....	२९
७ ज़मीन की समस्या	....	४१
८ संघ की स्थापना तथा शर्तबन्धी का खात्मा	....	४३
९ हड़ताल और गोलाबारी	....	४९
१0 हड़ताल का असली कारण	....	६२
११ अन्य जानकारियाँ	....	६६
तसवीर	....	७०

लेखक का परिचय

यह पुस्तक बतिया तावुआ फीजी के एक जाने माने सज्जन, स्वर्गीय हरनाथ जी की देन है। उन्हों ने अथक परिश्रम और लगन के साथ तमाम घटनाओं का जिक्र करते हुए इस पुस्तक को एक ऐतिहासिक दर्शन का रूप दिया है।

उनकी यह बहुत इच्छा थी कि वे जीते जी इस पुस्तक को आप तक पहुँचायें लेकिन उनका स्वर्गवास इस पुस्तक के प्रकाशन से पूर्व ही हो गया। इसीलिये इस पुस्तक का कार्य भार उनके ज्येष्ट पुत्र रतन प्रकाश के कन्धों पर आ गया। रतन जी के साथ साथ सारे परिवार ने भी यथाशक्ति योगदान दिया और नतीजा यह कि इस पुस्तक अब आप तक पहुँच सका।

हरनाथ जी का जन्म पच्चीस मार्च उन्नीस सौ छब्बीस को हुआ था। इन्हों ने अपनी क्लास ६ तक की शिक्षा वशिष्टमुनि मेमोरियल स्कूल और बिलोलो सनातन धर्म स्कूल में प्राप्त किया।

श्री हरनाथ जी का स्वर्गवास सत्ताइस फरवरी दो हजार चार (27/2/2004) को बा फीजी में हुआ। अपने जीवन काल में इनकी रुचि इतिहास, समाज कल्याण, धर्म और पढ़ाई में रहा।

हरनाथ जी बस्ती, यू. पी. भारत से गिरमिट प्रथा के अन्तरगत लाये हुये, मंगेरे, तावुआ के श्री मातादीन के पुत्र थे।

हरनाथ जी पेशे से एक सफल किसान थे। 1989 में इन्हें बेंक ओफ न्युजीलेन्ड द्वारा *कैन फर्मर ओफ दि इयर अवोर्ड* (BNZ Cane Farmer of the Year Award) से सम्मानित किया गया था। 1974 से ले कर 1978 तक ये एडवाइसरी कमीटी के चेयरमेन भी थे। सन् 1975 और 1995 के बीच इन्हों ने वशिष्टमुनि मेमोरियल स्कूल के खजान्ची का पद भी सम्भाला और देहान्तकाल तक ये मंगेरे स्कूल और शमशान भुमि के ट्रस्टी के पद पर थे। इन्हों ने अपने जीवन काल में कई गरीबों को सहायता पहुचाई और अन्त तक इनकी यही भावना बनी रही।

मैं इन के प्रति फीजी में हुए गिरमिट के कई घटित घटनाओं को, तथा उस समय के बिषयों को ऐतिहासिक परिच्चय आप तक पहुँचाने के लिये आभारी हूँ और आशा करता हूँ की इस पुस्तक से सम्भवता आप को कई एसी भी बातें मिलेगी जो शायद पहले प्रकाशित नहीं हुई।

सुभाष मुनेश्वर
वेलिंगटन, न्युजीलेन्ड

प्रकाशक के दो शब्द

फीजी का ऐतिहासिक दर्शन, एक बड़ी दिलचस्प पुस्तक है। इस में कई खूबियाँ हैं।

पहला, इस पुस्तक का लेखक कोई प्रोफेसर या पेशेवर लेखक नहीं है। लेखक एक आम और साधारण किसान थे जो अपनी ज़िन्दगी किसानी में लगा दिया और कठिन परिश्रम कर के अपने परिवार को उच्च स्तर की जीवन दिया। दूसरा, इस पुस्तक का लेखक केवल 6 कक्षे तक पाठशाला गया था, और वो भी बा के एक छोटे से स्कूल में।

लेकिन इन दोनों बातो के बावजूद, इस पुस्तक में वो गहराई है जो आजकल के जाने माने लेखकों के पुस्तक में आप को मिलेगी। जिस तरह से श्री हरनाथ जी फीजी का इतिहास का दर्शन कराते है, वहा सराहनीय है।

एसा हो सकता है, ये बात तो शायद कोई आज सोच भी नहीं सकता। लेकिन हरनाथ जी का ये पुस्तक ऐसी ही एक लाजवाब पुस्तक है।

पड़ने वालो को इस पुस्तक से ये भी प्रेरणा मिलेगी की अगर हिम्मत और लगन हो, तो कोई भी सज्जन कलम उठा सकता है और अपने विचार, या ऐतिहासिक घटनाओं को किताब के रूप में पेश कर सकता है। ऐसा कार्य फीजी के लिए बहुत ही ज़रूरी है। अपना इतिहास हम खुद ही लिखे, इस से बड़ी और कौन बात हो सकती है?

फीजी का ऐतिहासिक दर्शन, आप के लिए।

गणेश चन्द
प्रकाशक
वाइकस प्रेस
लौतोका

धन्यवाद के शब्द

मेरे पिता की इच्छा थी कि इस पुस्तक का प्रकाशन अवश्य हो ताकि लोगों तक यह ऐतिहासिक दर्शन पहुँच सके। मेरी रुचि फीजी के इतिहास और फीजी के भारतीयों के प्रति लगाव के कारण, मेरे पिता ने इस पुस्तक प्रकाशित करने को कार्यभार मुझे सौंपा। मैं ने इस को पिता का आशीर्वाद समझकार स्वीकार किया।

जब मैं ने उनके समक्ष में इस पुस्तक की पहली प्रतिलिपि को दिया तब उन्हें सम्पुर्ण विश्वास हो गया कि उनकी इच्छा की पूर्ति निश्चित है और उन्हों ने अपनी दूसरी पुस्तक 'धर्म ग्रन्थो के आधार' की हस्तलिपि भी मुझ को प्रकाशन के लिये दी।

मैं सर्वप्रथम वेलिंगटन, न्युज़ीलेन्ड के सुभाष मुनेश्वर जी को हृदय से धन्यवाद दे रहा हूँ जिन्होंने अथक परिश्रम करते हुए मेरे पिता के हस्तलिपि को एक पुस्तक का रूप देकर इसे समय पर तैयार किया।

मैं अपने समस्त परिवार को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने यथाशक्ति सहायता प्रदान की। इसके बाद मैं डा. गणेश चन्द जी और वाइकस प्रेस, लौटोका, फीजी को धन्यवाद देता हूँ जिनके सहयोग से इस पुस्तक का प्रकाशन सम्भव हो सका।

क्यों कि ईश्वर के बिना कुछ सम्भव नहीं हैं, मैं परम-पिता परमेश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि उन की कृपा से मैं ने अपने पिता की अन्तिम अभिलाषा को पुर्ण कर सका।

मैं अपने पिता के आत्मा के शान्ति के लिए प्रार्थना करते हुए इस पुस्तक को श्रद्धाजंली के रूप में आप को भेंट कर रहा हूँ।

रतन प्रकाश
वेलिंगटन
न्युज़ीलेन्ड

१
फीजी द्वीप

प्रशान्त महासागर सब से बड़ा है। इसकी चौड़ाई दस हजार मील से भी अधिक है। 'हवाई' द्वीप और 'फीलिपीन्स' के बीच इसकी गहराई अधिकतम ६ मील की है। इसी प्रशान्त महासागर में फीजी द्वीप समूह भी है।

इन्टर नैशनल डैट लाइन

'ताव्यूनी' द्वीप, जो फीजी द्वीप का एक भाग है, पर एक स्कोटलेन्ड निवासी अपना दूकान 180 डिगरी देशान्तर रेखा यानि 'इन्टर नैशनल डैट लाइन' पर बनाया था। यह रेखा दूकान को दो भाग करती हुई गुजरती थी। शनिवार को वह दूकान के एक दिशा का द्वार खोलता था और अगले दिन दूसरी दिशा का द्वार। इस प्रकार शनिवार के बाद सोमवार को उसकी दूकान खुलती थी। उसे रविवार को दूकान बन्द करने की नौबत नहीं आती थी। वह कभी छुट्टी नहीं लेता था। बाद में रेखा बदला गया ताकि फीजी में एक ही दिन रहे।

फीजी के छोटे छोटे चट्टानी टापुओं में से पहले जमाने में नूंगा (सामुद्रिक जन्तु) निकाला जाता था। ताव्यूनी के तालाबों के किनारे एक 'तांगीमोदिया' नामक फूल होते हैं जो कहा जाता है कि दुनियां के किसी भाग में नहीं उगते।

वीतीलेबू और वनुवालेबू

फीजी में दो ही बड़े टापू है जो 'वीतीलेबू' और 'वनुवालेबू' के नाम से जाने जाते हैं। वीतीलेबू की लम्बाई-चौड़ाई 90 × 50 मील हैं और कुल क्षेत्रफल 4011 वर्ग मील हैं। वनुवालेबू एक सौ मील लम्बा और पच्चीस मील चौड़ा (100 × 25) है और कुल क्षेत्रफल 2137 वर्गमील है।

नाकाउवान्ड्रा

फीजी का सब से ऊँचा पहाड़ 'माउन्ट विक्टोरिया' है जिसकी उँचाई 4341 फीट है। फीजी का सब से पवित्र शिखर 'नाकाउवान्ड्रा' माना जाता है। इसके शिखर पर चढ़ने के रास्ते में एक चट्टान की ऊँची दिवार रास्ता रोक लेती है। इस के पास ही एक चार फुट का चौड़ा और बहुत ही गहरा नाला है जो एक ओर शीतल और दूसरी ओर अति गर्म रहता है।

पुराने 'काईवीतियों' यानी आदिवासियों का कहना है कि तावुआ जिले के नकाउवान्ड्रा नामक ऊँचे पहाड़ पर एक बहुत गहरे गड्ढे में मुख्य नाग देवता रहते हैं जिस की पूजा इन दिनों हम लोगों के सामर्थ्य के बाहर है। हिन्दुस्तानी लोग भी इस बात को मानते हैं कि श्री कृष्ण जी ने कालिया नाग को भारत के जमुना नदी से लाकर यहीं पर 'रमणीक' द्वीप में छोड़ा था। फीजी द्वीप को श्रीमद्भागवत में रमणीक द्वीप कहा गया है।

'लम्बासा' (फीजी) में एक पत्थर है जो कि नाग के रूप में है और इस नाग पत्थर की पूजा की जाती है। यह पत्थर पहले छोटा था लेकिन अब ये काफी बड़ा हो गया है। जहाँ पहले लोग झुक कर हाथों से फूलमाला चढ़ाते थे वहां अब नहीं पहुँच पाने पर लम्बे डंडे के सहारे से चढ़ाते हैं।

फीजी के मूल निवासी अधिकाँश में 'मलेनेशियन' हैं। भारतियों की तरह ये भी लिंग और नाग की पूजा करते हैं हाँलाकि 'क्रिस्चन' धर्म के प्रभाव से इस प्रथा के अनुयायी कुछ कम हो गये हैं।

भाषा का मेल

हिन्दुस्तान के उड़ीसा और तमिलनाडू के निवासी पूर्वकाल में जावा, सुमात्रा और इण्डोनेशिया जा बसे थे।

काईवीतियों के भाषा में संस्कृत और दक्षिण भारतीयों के भाषा मिलते हैं। उदाहरण के तौर पर निम्न शब्दों पर गौर कीजिए -

भारती	**- काईवीती**
रामेया	- सुरमेया
बीरेया	- बारेया
तातेया	- तातेआ
बाला	- बाले

मानी - रमानी
रामजी - रमासी
श्यामलाल - सोमेला

रातू दाकोम्बाउ

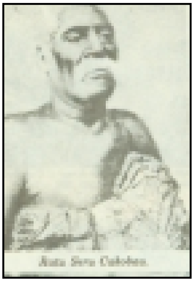

1809 की घटना है। चार्लस सैवज नाम का एक अंग्रेज नाविक आया और 'बाउ' के सरदार को काफी हथियार बेंचा। 1852 में 'सेरू' वहां का सरदार बना और हथियारों के बल अपने आप को राजा घोषित कर दिया। 'तोगां' द्वीप से व्यापार तो पहले से ही होता था लेकिन 'लाउ' टापू पर इसका अधिक प्रभाव पड़ा। सेरू को शत्रुओं ने 'दाकोम्बाउ' नाम दिया।

ब्रिटिश राज

भारतीयों के आगमन से पहले दाकोम्बाउ सरकार इधर-उधर से पकड़े हुए बंदियों को बेचता था। 10/10/1874 को फीजी द्वीप समूह बिना कोई शर्त के ब्रिटिश महारानी को सुपुर्द कर दिया गया। इस दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करने वाले दाकोम्बाउ के साथ अन्य बारह प्रमुख सरदार भी शामिल थे।

1875 में सर आथर गोर्डन फीजी के प्रथम गर्वनर हो कर आए। सर गोर्डन के आगमन से पहले चेचक की महामारी बीमारी आई और इस में एक तिहाई जनता काल ग्रस्त हुई।

२
हिन्दुस्तानियों का आगमन

हिन्दुस्तानियों को फीजी गिरमिट प्रथा के अन्तरगत सर्व प्रथम (1879) में लाया गया था।

एक मई अट्ठारह सौ सात (1/5/1807) से यह कानून हिन्दुस्तान से लागू हुआ कि कोई ब्रिटिश जहाज बंदरगाह से बाहर नहीं जा सकेगा अगर उस जहाज में गुलाम भरे हुए हों। जब उस से भी काम नहीं चला तो नया आदेश यह निकला कि एक मार्च १८०८ (1808) से किसी गुलाम को किसी जहाज से ब्रिटिश उपनिवेशों में नहीं उतारा जा सकता। हुआ यह कि अन्य देशों के जहाजों के द्वारा गुलामों की पुर्ति होने लगी।

सन् 1811 ई. में नया कानून बना जिस से गुलामों को लाने ले जाने की अपराध में जन्म कैद की सजा लागू कर दी गई। १८३४ (1834) में ब्रिटिश सामराज्य में गुलामी प्रथा समाप्त कर दी गई। लेकिन बारह साल तक मजदूरी कराने का अधिकार था। बाद में इसको घटा कर सात साल कर दिया गया। इसके बाद चार साल कर दिया गया। १८३८ (1838) में यह प्रथा समाप्त हो गई।

मोरिशस में विकास

सन् १७३५ (1735) ई. में 'बाट्रंड फेकोइस माही लेबरदोनेस' ने अधिकाँश फलदार वृक्षों के बीज भारत से लाये और फिर मोरिशस में कपास, चावल, गेहूँ और मक्का उगाये गये। इसी समय मोरिशस में पहली चीनी की फेक्टरी बनी और चूने की भट्टियां खोदी गई। भारतीयों की संख्या ज्यादा थी। उन में से इंजीनियर, कारीगर, बढ़ई, सोनार और व्यापारी भी थे।

१८१३ (1813) ई. में फ्राँसीसियों के मंगाये मोरिशस के गुलामों को ब्रिटिश साम्राज्य ने स्वतन्त्रा कर दिया जिनकी संख्या ६८,११३ (68,113) थी।

२६ मई १८३६ (1869) से भारत सरकार ने कानून लागू किया कि जो

कोई किसी को उसके इच्छा के विरूद्ध मज़दूरी करने के लिये बाहरी देश ले जाएगा, उसे २०० रूपये का जुरमाना या तीन महीने जेल होगा।

प्राया छोटा नागपुर के ढाँगर जाति के लोग जो संथा, मुण्डा और उरांव के नाम से पुकारे जाते हैं, बंगाल तथा बिहार के आदिवासी जिलाओं में निवास करते थे और बहुत गरीब थे।

लंका में भारतीय मज़दूर

१८२३ (1823) ई. में लंका में कोफी का उत्पादन शुरू हुआ। इसके बाद शर्तबंदी प्रथा के नीचे भारत से मज़दूर लंका भेजना शुरू हुआ।

अस्ट्रेलिया में चीनी उद्योग

अस्ट्रेलिया में चीनी उद्योग का आरम्भ १८३४ (1834) में हुआ जब 'अस्ट्रेलेशियन शुगर कम्पनी' की स्थापना की गई। चालिस हजार पौंड के कल-पुरजे लन्डन से भेजे गए। 'केडबरी' में चीनी साफ करने वाली एक रिफाइनरी की स्थापना हुई। १८४२ (1842) ई. में एडवर्ड नोक्स के संचालन के अन्तरगत फीलिपीन्स से कच्ची चीनी मंगाई जाने लगी। सिडनी की ओकोनल स्ट्रीट के एक नम्बर में एक बहु-मंजिली इमारत खड़ी है, जिसे नोक्स हाउस के नाम से जाना जाता है। इस कम्पनी का नाम १८५५ (1855) में 'कोलोनियल शुगर रिफाइनिंग कम्पनी' रक्खा गया।

३
फीजी में गन्ने की व्यवसाय

१८७० (1870) ई. में दो अंगरेज 'ब्राउन और जोसके' ने सर्व प्रथम सूवा में चीनी का एक छोटा मिल बनाया था। नावुवा और रेवा नदी के तट पर चाय के बागान भी लगाये थे। दोनों ने लाउ द्वीप समूह में गन्ने भी उगाये थे जिन में मांगो द्वीप प्रमुख था।

१८८२ (1882) ई. में एक अस्ट्रेलिया की कम्पनी ने बड़े स्तर पर नौसोरी में चीनी मिल बनाई। बाद में यह 'वेनकूवर फीजी शुगर कम्पनी' के नाम से प्रसिद्ध हुई। जब भारतीय मज़दूरों का आना रूक गया, तब यह कम्पनी १९२२ ई. में बन्द हो गई। इस मिल को कोलोनियल शुगर रिफाइनिंग कम्पनी (CSR) ने खरीद ली। इस कम्पनी ने भी सन् १९६२ (1962) के बाद एक सहायक कम्पनी बनाई जिसका नाम 'साउथ पेसिफिक शुगर मिल्स' रक्खा गया।

सन् १८८५ (1885) में अस्ट्रेलिया के अन्दर २६८ मिलें थी, लेकिन कुल मिला कर केवल ७९,००० (79,000) टन चीनी बनाती थी। फीजी केवल छ: मिलों से ही ६०,००० (60,000) टन चीनी प्रति वर्ष बनाता था।

सन् १९५५ (1955) तक गन्ना पैदा करने वाली ज़मीन ५२ प्रतिशत कम्पनी के कब्जे में था। इसके बाद धीरे धीरे केवल तीन ही प्रतिशत बचे जिस पर खेती होती थी।

सन् १९०३ (1903) में लौटोका मिल की स्थापना हुई और इसकी पेराई की क्षमता ६: हजार ६,००० (6,000) टन प्रति घन्टा की थी। यह चीनी मिल दक्षिण प्रशान्त महासागर में सब से बड़ी थी। रारावाई मिल सन् १८८६ (1886) में स्थापित की गई जो ३३०,००० (330,000) टन गन्ने पेरती थी। लम्बासा मिल सन् १८९४ (1894) में स्थापित हुई और इसकी पेराई की क्षमता १७०, ००० (170,000) टन की थी। सन् १९२६ (1926) में कोलोनियल शुगर रिफाइनिंग कम्पनी ने नावुआ मिल को खरीद कर पिनेंग में स्थापित किया जो फिर पिनेंग मिल के नाम से जाना जाने लगा। इसकी क्षमता ९५,००० (95,000) टन की थी।

कम्पनी के नौसोरी वाले मिल की क्षमता भी १७०,००० (170,000) टन

की थी लेकिन यहाँ ज्यादा पानी बरसने के कारण सन् १९५५ (1955) में बन्द कर दी गई। इस समय, फीजी में चीनी की कुल खपत २०,००० (20,000) टन की थी। चीनी के मिलान में चावल की उत्पादन बारह हजार की थी।

तम्बाकू की खेती

फीजी में तम्बाकू की खेती शुरू हुई सन् १९५५ (1955) में जब 'ब्रिटिश टबेको लिमिटेड' और १९५६ (1956) में 'करेरस लिमिटेड' कम्पनियों की स्थापना हुई। सन् १९७१ (1971) से दोनों कम्पनियाँ मिल कर एक हो गई।

फीजी में काईवीतियो की शिक्षा

ब्रिटेन की रानी विक्टोरिया का राज सन् १८७४ (1874) में स्थापित हुआ परन्तु इन की राजदूत फीजी में १८३५ (1835) में ही ब्रिटिश कौन्सलर के रूप में आ गया था।

सन् १८३४ (1834) में तोंगा (Tonga) के ब्रिटिश पादरी रेवरन्ड विलियम और डैविड कारगिल ने फीजी में धर्म प्रचार के लिये तैयारी की और फीजीयन भाषा में पढ़ने लिखने के लिये पहली किताब छापी। उन्हों ने एक धर्म पुस्तक भी अनुवाद कराई। सन् १८३५ (1835) में इस समूह ने, जिसमें उनकी पत्नियाँ तथा अन्य परिवार के लोग थे, कुछ तोंगा निवासियों के मदद से लकेम्बा में प्रवेश किया।

तोंगा नरेश जोर्ज, जो इसाई हो चुके थे, लकेम्बा के सरदार तुईनयाउ को कुछ उपहार दे कर उनसे अनुरोध किया कि वे पादरियों को संरक्षण प्रदान करें। इस तरह यहीं से इसाई धर्म का प्रचार उन्होंने फीजी में शुरू किया। सन् १८३७ (1837) में वे रेवा पहुँचे। १८३८ (1838) में तीन पादरी और आ गए।

उसी समय एक युरोपियन दल चन्दन का व्यापार करने के लिये फीजी आया था। तोंगा निवासी पहले से ही चन्दन के लकड़ी से नाव बनाने और बढ़ई का काम करने के लिए फीजी आया करते थे। इसके बाद कई और व्यापारी आया जाया करते थे, कोई चन्दन के लिए, कोई कपास उगाने के लिए और कोई नारियल के लिए।

सन् १८५८ (1858) में महारानी विक्टोरिया का दूत भी आ गया था। इन के पहुँचने से पहले ही कुछ व्यापारी अड्डे जमा लिए थे और कुछ ब्रिटिश के इसाइयों ने गिरजा घर जगह जगह पर बना रक्खे थे।

४
मज़दूरों का आना

यहां पर साल में एक हज़ार मज़दूर लाये जाते थे जब कि केवल एक ही मज़दूर को रखने की इजाजत (permit) थी। बुरे व्यवहार के कारण धीरे धीरे सन् १८३६ (1836) तक इनकी संख्या गिर कर केवल एक सौ ही रह गई। व्यापार में गिरावट हुई। पंडित तोताराम के अनुसार नेपाली सन् १८९४ (1894) के बाद फीजी आए थे। सिंगातोका के पास इनकी बस्ती थी।

सन् १९०२ में फीजी ने मदरास में भरती करने का दफतर खोला। कुछ मोरिशस के लोग बिना शर्तबन्धी के फीजी १८७९ (1879) से १९१६ (1916) के बीच आए थे। इन में से अधिकाँस गुजराती और पंजाबी थे।

बंगाल सरकार के अनुसार फीजी आने वाले के आँकड़े इस प्रकार थे:

उच्च वर्ग वाले	19.1 प्रतिशत
किसान	31.3 प्रतिशत
कारीगर	6.7 प्रतिशत
हरिजन	31.2 प्रतिशत
मुसलमान	14.6 प्रतिशत
इसाई	0.1 प्रतिशत

बीस से तीस वर्ष तक के आयू का औसत ६८.६ प्रतिशत था। सोलह से पच्चीस वर्ष तक की आयु ठीक मानी जाती थी। कलकत्ता, मद्रास और बम्बई की बन्दरगाहों से ही लोगों को बाहर भेजा जाता था।

आगरा के एक युरोपियन अफसर ने उन लोगों को फीजी जाने से रोकने की कोशिश की, पर उन्हों ने उस साहब की बात नहीं मानी। प्रति व्यक्ति को दो सौ दस रुपये अथवा उस से अधिक में बेचा जाता था। सन् १९०९ में आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी। दो-तीन आना मज़दूरी मिलती थी, जब कि पश्चिमी संयुक्त प्रान्त में चार आना था।

श्री सी. एफ. एन्डुज़ के अनुसार एक अरकाठी ने गांव के एक आदमी,

जिसका नाम फकीरा था, उसके औरत और लड़की को बहका कर उससे अलग कर दिया। इस अरकाठी ने फकीरा से कहा कि अगर तुम इतने रुपये दो तो हम तुम्हारी स्त्री और पुत्री को वापस दे सकते हैं। वह रुपये ना दे सका और ना अपने स्त्री और पुत्री को फिर मिल सका।

कहा जाता है कि एक बार फीजी फौज और पुलिस की नौकरी के बहाने कुछ लोगों को फीजी लाया गया था। वे अपने साथ लुका छुपा के कुछ हथियार लाए थे जिसके सहायता से उन्हों ने एक जिला को अपने बस में कर लिया था। बाद में सरकार ने उन्हें अलग-अलग कर के वश में कर लिया।

कुछ जहाजों की आने का समय -

गंगा जहाज	1913
सजल जहाज नम्बर चार	1913
मुलताना जहाज	1915

फूलताला जहाज मद्रास से १९०६ में १२४ यात्रियों को ले कर चला लेकिन उसी दिन ६१ यात्री हैजा के बीमारी से मर गए। उस जहाज को सिंगापुर रुकना पड़ा।

तोताराम सनाढ्य की पुस्तक *'फीजी द्वीप में २१ वर्ष'* कुछ उदाहरण इस प्रकार दिए हैं:

> उन्हों ने कहा कि जब जहाज पर चढ़ने को दो या तीन दिन शेष रहे, तब हमारी डाक्टरी परीक्षा हुई। तदपश्चात् पहनने के लिये कैदियों जैसे कुरते, टोपी और पाजामा दिए गए। पानी के लिए टीन का लोटा, भोजन करने के लिए टीन की थाली और सामान रखने के लिए एक छोटा सा थैला दिया गया।

तोता राम सनाढ्य एक गिरमिटिया था। एक जहाज पर ५०० यात्री चढ़ाए गए और एक आदमी को एक और आधा फुट चौड़ी और छः फुट लम्बी जगह दी गई। खाने को चार चार 'डोग बिस्कुट', चीनी और पानी दिए गए। जबरन 'टोर्पस' का काम कुछ लोगों से कराया गया। भोजन, मछली-भात मिलता था और लोग इस तरह थे जैसे एक स्वतन्त्र पक्षी बन्द पिंजरे में हो। जो इन्कार करता था उन्हें मार-पीट कर काम कराया जाता था। दिन भर पीने को सिर्फ दो बोतल पानी मिलता था। समुद्री बीमारी यानी 'सी सिकनेस' से कई लोग पीड़ित हुए और कई मर गए जिन्हें समुद्र में फेंक दिया गया।

लौटते समय एक आदमी उतना ही सामान ले कर जा सकता था जितना वह एक ही बार में उठा सके। बाकी वहीं डीपू में छूट जाता था। खाना बाँटते समय एक गोरा डाक्टर दो एक आदमी को बेंत से मारता जाता था। मैं ने उसका फोटो ले लिया। जब उसको मालूम हुआ तो वह केमरा मुझ से लेकर समुद्र में फेंक दिया। मुझे मालूम था कि मेरा पीछा किया गया है। लेकिन मैं एक मित्र के सहारे उस के बक्से में अपना जो कागज पर पत्र लिखा था उसे निकालने में समर्थ हुआ।

जहाज पर एक कप चावल और एक कप दाल दी जाती थी। सुबह शाम बचा हुआ माल समुद्र में फेंक दी जाती थी। इन भोले भाले आदमियों को मेजिस्ट्रेट, डाक्टर और कप्तान सताया करते थे। फीजी में जो मेजिस्ट्रेट थे, वे बहुत कम पढ़े थे। केवल गोरे होने के नाते काम करते थे। तोता राम सनाढ्य के अनुसार ताव्यूनी में एक ही आदमी मेजिस्ट्रेट, डिसट्रिक्ट मेडिकल अफसर, जिले का डाक्टर, पुलिस इन्सपेक्टर, जेल खाने का सुपरिन्टेन्डन्ट, बंदरगाह का स्वामी, सड़कों का दरोगा और अपने छोटे जहाज का कप्तान था।

भारत और फीजी आने जाने वाले जहाज ब्रिटिश इंडिया स्टीम कम्पनी के उन जहाजों में से लाये गए थे जो कि कुली जहाज कहलाता था। इस से साफ जाहिर है कि कितना कष्ट दिया जाता होगा। सितम्बर आठ १९२८ (1928) को प्रवासी भारतियों को लेकर *'सतलज'* जहाज भारत जा रहा था। उस यात्रा के दौरान ४४ भारतीय काल-ग्रस्त हो गए। वैसे जो जहाज आते जाते, उनके यात्रों में किसी ना किसी संख्या में यात्रियों की मृत्यु हो ही जाती थी। किसी का उस पर ध्यान नहीं गया। सतलज जहाज काण्ड को लेकर विशेष शोर मचा। हिन्दी और अंग्रजी के अनेक पत्रों ने दुर्घटना के बारे में अनेकों पत्र छापे।

बनारसी दास

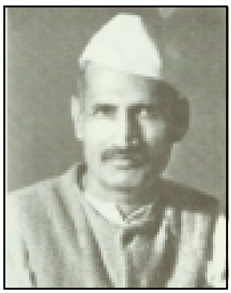

बनारसी दास जी ने इस काण्ड के सम्बन्ध में टीका करते हुए लिखा कि गिरमिट प्रथा समाप्त हो गई परन्तु कुली जहाजों में यात्रियों को बुरी तरह भरा जाता है। फीजी से कलकत्ता आने वाले सतलज जहाज में ९०० (900) यात्री थे। अब उसी जहाज पर २४ लोगो के मरने का समाचार मिला। डरब से बम्बई आने में बीस दिन और लगेंगे। इस

बीच ना जाने कितने और मरेंगे। उसी जहाज पर मृत्यु काण्ड और हुआ। इस बार ४४ यात्री मरे। यह २१/११/१९२० को कलकत्ता आया। २२ जनवरी को मैं और स्वामी भवानी दयाल सन्यासी जहाज पर पहुँचे। यात्रियों से उनके कष्टों के बारे में सुन कर उन्हें बहुत दुख हुआ। हम अव्रजको के संरक्षक से मिले। उनका व्यवहार बड़ा ही बुरा था। हमने उसी दिन भारत सरकार के सचिव सर हबीबुल्लाह को तार दे कर जाँच की माँग की।

३० जनवरी १९२९ (1929) को स्वामी भवानी दयाल सन्यासी जी को अव्रजकों के संरक्षक का पत्र मिला कि बंगाल सरकार ने एक मेजिस्ट्रेट को जाँच के लिये नियुक्त कर दिया है। उनके साथ जाँच में आप और मैं भी हूँगा। जाँच ३ फरवरी १९२९ को आरम्भ होगी। समय के बारे में बाद में सुचित किया जाएगा।

स्वामी भवानी दयाल सन्यासी ने उस जाँच में भाग लेना उचित ना समझा क्योंकि जाँच तुरन्त करनी चाहिए थी। सरकार देर पर देर करती चली जा रही थी। यात्री इधर उधर चले जा रहे थे। कब तक उनको रोका जा सकता था। सरकार ने सतलज जहाज को रोका तक नहीं। ९०० (900) यात्री लेकर वह जहाज फिर फीजी चला गया।

'इम्पीरियल इन्डियन सिटीज़नरी असोसिऐशन बम्बई' के सचिव ने इस बारे में एक वक्तव्य जारी किया, जिस से सितम्बर १९२० (1920) के सतलज काण्ड को लेकर संस्था ने भारत सरकार से लिखा पढ़ी की। सरकारी सूचना के अनुसार कलकत्ता के मेजर डबल्यु. ओ. वोकर और २४ परगना कलकत्ता के ई. एन. ब्लेडी ने जाँच की थी।

उनकी रिपोर्ट में कहा गया कि सतलज जहाज में ७४५ (745) यात्री थे। उन में से ३७ मर गये। मरने वालों में ३० को साँस की बीमारी थी, और सात यात्रियों को हृदय और मलेरिया आदि की बीमारी थी। अधिकाँश मरने वाले वृध थे। १९२३ से इन बोटों से आने वाले यात्री अक्सर मरते ही रहते हैं।

सतलज-काण्ड की दर्द भरी कहानी पढ़ कर महात्मा गाँधी ने गुजराती के अपने पत्र *'नवजीवन'* में १०/२/१९२९ को जो टिप्पणी लिखी उसका शीर्शक था 'राक्षसी पद्धति'। उक्त टिप्पणी का आगे हम अविकल दे रहे हैं। सतलज जहाज की दर्द भरी बातों पर जब महात्मा जी ने जाँच की माँग की तो पता चला कि सरकार ने अपनी सफाई देने के लिए पहले से ही तैयारी किए बैठी थी। उसने दो अधिकारियों को जाँच के लिए नियुक्त कर दिया और उन्होंने यह रिपोर्ट दी कि ऐसी मौत की घटनायें तो इस तरह के जहाज पर हमेशा ही हुआ

करती हैं। कितनों को बूढ़ा बताया गया, कितनों को बीमार। इनको लौटना नहीं चाहिये था क्योंकि ये यात्रा के योग ही नहीं थे।

आप इसी से अन्दाजा लगा सकते हैं कि जाँच करने वाला एक व्यक्ति तो उपनिवेशों में जाने और वहाँ से लौट के आने वालों का संरक्षक और दूसरा उस प्रदेश का जिलाधीश था। जिन पर जुल्म का आरोप लगाना था, उन्हीं को ही सरकार ने निरिक्षणकारी बना कर अपना बचाव कर लिया (गुजराती, नवजीवन में १०/२/१६२६ सम्पूर्ण गाँधी वाइडमय, खण्ड ३६, पृष्ट ४१८ (418) - ४१६ (419) पर)।

गिरमिट प्रथा के नीचे कितने मज़दूर फीजी पहुँचे थे

जहाज के नाम	फीजी कब पहुँचा	मजदूरों की संख्या
लियोनीदास	15/5/1879	463
भरार	26/6/1882	424
पूना (1)	17/9/1883	478
भयार्ड	20/8/1883	494
पूना (2)	19/6/1883	496
इसरिया	14/5/1884	348
हावड़ा	26/6/1884	585
पैरिकलीस	3/7/1884	461
नयूनहम एस. एस.	23/7/1884	575
मैन	30/4/1885	725
गैंजज़	27/6/1885	523
बोयन	26/4/1886	537
हरफोई (1)	24/4/1888	539
मोय (1)	3/5/1889	677
रोनी (1)	15/5/1890	585
एलनशा	17/6/1890	573
डेन्यूब	15/6/1891	591
जमना	22/6/1891	439
ब्रिटिश पियर	23/4/1892	527
एवन (1)	5/5/1892	520

जहाज के नाम	फीजी कब पहुँचा	मजदूरों की संख्या
हरफोई (2)	16/6/1892	479
मोय (2)	14/4/1893	467
जमना (2)	23/5/1893	310
एम्स (1)	20/4/1894	570
हरफोई (2)	28/6/1894	511
डाल एस. एस.	26/3/1895	747
एर्न	24/4/1896	557
विरावा एस. एस.	26/4/1895	677
एल्बी (1)	13/6/1896	615
रोनी (2)	11/5/1897	653
क्लाइड	1/6/1897	670
मोय (3)	1/6/1898	568
एवन (2)	25/7/1899	467
गैंजज़	3/9/1899	464
गैंजज़	21/6/1900	554
अर्नौ	23/7/1900	627
एल्बी (2)	26/7/1900	604
राइन	30/8/1900	491
फज़िलका एस. एस.	28/3/1901	704
फुलताला (1) एस. एस.	12/5/1901	809
फज़िलका (2) एस. एस.	18/6/1901	776
विरावा (2) एस. एस.	26/4/1902	718
फज़िलका (3) एस. एस.	20/6/1902	840
मर्सी	13/6/1903	585
एल्बी (3)	5/8/1903	590
अर्नौ (2)	4/9/1903	634
अर्नौ (3)	3/5/1904	631
एम्स (2)	30/7/1904	526
फुलताला (2)	10/4/1905	827
विरावा (3)	17/7/1905	615

जहाज के नाम	फीजी कब पहुँचा	मजदूरों की संख्या
वर्धा (1)	28/7/1905	892
फुलताला (3)	17/8/1905	790
फज़िलका (4)	17/4/1906	881
फुलताला (4)	28/4/1906	801
वर्धा (2)	28/6/1906	839
फज़िलका (5)	28/1/1907	875
विरावा (4)	23/3/1907	759
फज़िलका (6)	25/4/1907	786
संगोला (1)	18/3/1908	1132
संगोला (2)	6/6/1908	1086
संगोला (3)	1/2/1909	1152
संगोला (4)	21/4/1909	667
संगोला (5)	7/3/1910	926
सन्थिया	22/4/1910	1021
संगोला (6)	5/6/1910	869
सन्थिया (2)	8/7/1910	1030
मुतला (1)	22/5/1911	834
सतलज (1)	25/6/1911	850
गेंजज़ (1)	22/7/1911	860
मुतला (2)	18/8/1911	863
सतलज (2)	4/10/1911	811
सतलज (3)	27/4/1912	857
इण्डस	8/6/1912	804
गैंजज़ (2)	18/6/1912	843
गैंजज़ (3)	8/11/1912	846
गैंजज़ (4)	21/2/1913	771
गैंजज़ (5)	29/5/1913	848
गैंजज़ (6)	9/9/1913	784
सतलज (4)	11/4/1913	808
चिनाब (1)	24/3/1914	855

जहाज के नाम	फीजी कब पहुँचा	मजदूरों की संख्या
चिनाब (2)	16/6/1914	717
मुतला (3)	7/5/1915	852
गैंजज़ (7)	21/6/1915	846
मुतला (4)	1/8/1915	812
चिनाब (3)	1/9/1916	882
सतलज (5)	11/11/1916	888

८७ (87) जहाज फीजी पहुँचे। इसके बाद गिरमिट प्रथा समाप्त हो गई।

जय फीजी पत्रिका विशेषाँक ११/५/१९७९ से:

खराब मौसम के समय जहाज पर भोजन नहीं पकाया जाता था। यात्रियों को बिस्कुट, इमली और प्याज खाने को दिये जाते थे। डाक्टर ग्रान्ट के १८८४ (1884) अनुभव के अनुसार, दक्षिण मार्ग से जानेवाले जहाज पर ऐशिया के रहने वाले लोगों को बड़ा कष्ट होता था। उस मार्ग पर अधिक समय तक ठन्ड और तूफान का सामना करना पड़ता था। जहाज वालों को अनुभव था कि सितम्बर और फरवरी के बीच की यात्रा ही ठीक रहती थी। फीजी के लिये कुली ले जाने वाली जहाज-कम्पनियों के लिए नोर्थ लाइन प्रमुख थी।

१९०२ से 'ब्रिटिश इण्डिया स्टीम नेविगैशन कम्पनी' ने प्रति कुली पर छ: पौंड दस शिलिंग का टेन्डा किया था।

प्रोफेसर टिंकर का कहना है कि कुलियों, यात्रियों को गरम कपड़ा दिया जाता था। सैनिकों की उतारी लाल वर्दी गरम कपड़ों की जगह दी जाती थी। प्रोफेसर टिंकर का कहना है कि फीजी लाने वाले जहाजों पर चीनी कुलियों के साथ बुरा बर्ताव करते तो वे जहाज में आग लगा देते थे। चीनी कुलियों ने 34 जहाजों में आग लगा दी थी। भारतीय यात्रियों का खुटपुट विरोध कभी भी उग्र रूप धारण नहीं किया था।

तोताराम सनाढ्य के अनुसार *'लियोनीदास'* जहाज पर ४८१ (481) यात्री तक थे। फीजी पहुँचने पर केवल ४६३ (463) ही बचे थे। यह जहाज पाल से चलता था और ७२ दिनों के बाद १५/५/१८७९ को फीजी पहूँचा था। हैजा

और चेचक बीमारी के कारण लेबूका बंदरगाह पर जहाज को नहीं लाने दिया गया पर लाई लाई नामक एक छोटा सा निर्जन टापू जो निकट था वहाँ ले जाते समय जहाज तूफान के कारण चट्टान पर चढ़ गया था और ज्वार भाटा आने से उतारा जा सका। उसी टापू पर उन्हें उतार दिया गया था। ६/७/१८७९ को जहाज फीजी से फ्राँसिस्को के लिए लौट पड़ा।

टापू पर 15 और यात्री मर गए। ९/८/१८७९ को बचे लोगों को भिन्न भिन्न कोठियों पर भेज दिए गए।

सूवा से सात मील के दूरी पर नुकुलाऊ नामक द्वीप में फीजी सरकार ने एक डिपो बनाया। *'लियोनीदास'* के बाद जो जहाज आते थे, उनके यात्री यहीं उतारे जाते थे।

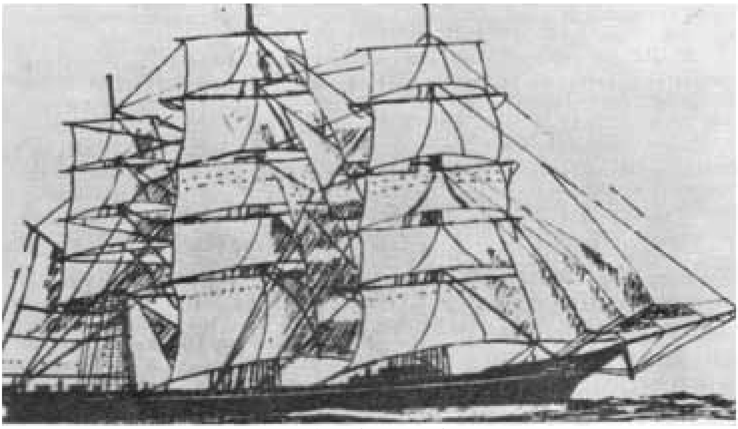

'लियोनीदास'

सिरिया जहाज कलकत्ता से १३/३/१८८४ को ४३९ (439) यात्री लेकर फीजी के लिए रवाना हुआ था जिन में से केवल ३४८ (348) ही फीजी पहूँचे थे। ११/५/१८८४ की आधी रात को तूफान के कारण चट्टान से टकरा कर जहाज डूब गया और ३२ पुरूष, १५ स्त्रियाँ, दस बच्चे मारे गए। बारह मई को प्रात: फीजी के डाक्टर मैक्ग्रेगर ने यात्रियों को बचाने का कार्य आरम्भ किया। गांव के काईवीती अपनी अपनी नावों को ले कर रक्षा कार्य में जी जान से जुट गए थे।

जिन लोगो ने इस रक्षा कार्य में प्रमुख रूप से भाग लिया था, उनका नाम

था एस. फौल्डर एक पुलिस अधिकारी, जोशुआ और एपरम्मा। इनके साथ साथ पुलिस सिपाही सवानी, कोर्पल अमोसी, एक ग्रामीण और डाक्टर मेक्ग्रेगर कार्यभार सम्भाल रहे थे। जिन यात्रियों की जाने बच गई थी, उनकी हालत खराब थी। फीजी वासियों ने चन्दा इकत्र कर के उन सब को कपड़े और चार सौ पौन्ड पैसे भी दिए।

टिंकर के अनुसार

श्री हियू टिंकर ने अपनी पुस्तक *'एन्ड ओफ स्लेवरी'* के पृष्ठ १५१ (151) तथा १६७ (167) पर सिरिया जहाज के बारे में विशेष जानकारी दी है। इस काण्ड के दौरान कुछ काईवीतियों ने बड़े संकट में पड़ कर अपनी अपनी नावों को किनारे पर पहुँचाया और कुछ डूबते जहाज और यात्रियों को लूटा। दुर्घटना स्थान के निकट वाले छोटे टापू के एक स्थान पर १६ मृतकों को दफनाया गया और श्री चन्द्र दीप नारायण की ज़मीन में उनकी कबरें आज भी सुरक्षित बताई जाती हैं।

पं. तोताराम सनाढय की नौसोरी कुली लाइन का आँखों देखा हाल 'लोकराज' पत्रिका के १६ जून १९७३ (1973) के अंक में छपा था। उन्हों ने लिखा था 'यह विवरण सन् १८९३ (1893) की मई महीने की २८ तारीख का है। उस समय मज़दूरो को फीजी आना चौदह साल पुराना हो चुका था। मैं कोलोनियल शुगर रिफाइनिंग कम्पनी फीजी का शर्तबन्द मज़दूर हो कर रेवा जिला नौसोरी नामक कोठी मे पहुँचा। मेरे साथ १४० आदमी और थे। एक अंग्रेज ने आकर सब लोगों को घर भेज दिया। लेकिन मैं अकेला ही बचा। मेरे लिए जब घर खाली नहीं मिला, तब उसने कहा कि चलो तुम्हें भूत लैन में घर दें। यहाँ पर पहले भूत लैन का हाल संक्षेप में लिखना आवश्यक है।

नौसोरी कोठी में शर्तबन्द मजदूरों के लिए २६ कुली लैनें थी। हर एक कुली लैन में चौबिस-चौबिस कोठरियाँ थी। हर एक कोठरी में तीन आदमी रहते थे। स्त्री-पुरूष हुए तो दो के लिए ही कोठरी में बाल-बच्चों सहित रहने के लिए दी जाती थी। इस तरह लगभग पन्द्रह सौ स्त्री पुरूष अलग अलग लैनों में रहते थे। इन २६ लैनों से कुछ फासले पर एकान्त में एक भूत लैन में पहले इसी कम्पनी का काम करने वाले फीजी के आदिवासी रहते थे। जब बीमार होने के कारण ८ आदिवासी मर गए, तब शेष आदिवासी इस लैन को छोड़ कर भाग गए। तब से इस लैन का नाम भूत लैन पड़ा। इस लैन में रहना कोई स्वीकार नहीं करता था। इसी लैन में मुझे रहने के लिए एक कोठरी दी

गई। तब औवरसियर ने मुझ से कहा, 'यह घर तुमको पाँच वर्षो के लिए दिया जाता है। अगर तुम इसको छोड़ दोगे तो फिर दूसरा घर तुम को नहीं मिलेगा। बिना हुक्म घर छोड़ने के अपराध में तूमको कैद में रहना पड़ेगा।' यह कह कर वह चला गया। मै ने भूत लैन को चारो तरफ घूम कर देखा। इस में चौबीस कोठरियाँ थी जो घास के जंगल से घिरा हुआ था। घास इतने लम्बे थे कि अगर कोई आदमी उस में घुस जाए तो बाहर खड़ा हुआ आदमी नहीं दिख सकता था। मैंने तुरन्त अपने कोठरी के सामने साफ किया। फिर चूहों की खोदी हुई मिट्टी को बाहर फेंका। चार घण्टे में कोठरी को साफ कर के कम्बल बिछा कर कोठरी में बैठ गया। बैठते ही बाहर घास से निकल कर मच्छर मेरे शरीर से चिपट गए। शरीर में कोई जगह खाली नहीं छोड़ी। शरीर पर चक्ते पड़ गए तब मैं ने घर में धुआँ किया और चूल्हा बनाया।

इतने में कम्पनी के दफतर से हुक्म हुआ कि नए कुली दफतर जाकर खाने के लिए राशन ले आवें। सब के साथ मैं भी राशन लाने दफतर गया। तीन सेर आँटा, दाल एक सेर, पाव भर नमक और एक सेर चावल ले कर घर को चलने लगा तो मैनेजर ने कहा, 'हुक्म सुनों'। मैं खड़ा हो गया। तब उसने कहा, यह राशन सात दिन के लिए है। इसको बेचना नहीं। इसके बदले में दूसरी चीज लेना नहीं, किसी को खिलाना नहीं। इस हुक्म को ना मानने वाले को एक से तीन सप्ताह तक की सजा हो सकती है। अगर बीच सप्ताह में राशन खत्म हो गई तो भूखा मरना पड़ेगा, बीच में राशन नहीं मिलेगी। मैंने मन ही मन सोचा कि यह कैसा देश है जहाँ खाना देना भी अपराध है और सजा हो सकती है।

एक दिन ऐसी घटना हुई कि सप्ताह के बीच उनके जिले और पड़ोस के पाँच लोग आ गए। उनको खिलाने से राशन खत्म हो गई। कई दिन मुझे भूखा काम करना पड़ा। इसी दौरान एक दिन भूख के कारण मैं कारखाने में गया। एक साथी ने मुझे एक लोटा रस दे कर चला गया। जैसे मैं पीने लगा वैसे ही चीनी के डाक्टर ने देख लिया। वह लोटा छीन कर सिर पर एक झापड़ मारा और कहा खेत में काम करने वाले को रस पीने का हुक्म नहीं है। कान पकड़ कर कारखाने से बाहर कर दिया।

श्री तोताराम सनाढ्य भूख के मारे उसी रात को फाँसी लगा कर मरना चाहते थे कि किसी ने जोर से किवाड़ को धक्का मारा और फाँसी का फंदा उसके हाथ से छूट गया। उसी समय चार आदमवासी यानी काईवीती कमरे में घुस आए और बोले कि भाई थोड़ा खाना दो। श्री सनाढ्य ने कहा मेरे पास

खाने की कोई चीज नहीं है। उन्हों ने चूल्हे पर चढ़ी हंडी देखा, उस में कोई डेढ़ पाव चावल था, जो वे बाँट कर खा गए। और फिर कहा, हमारे भाई की मृत्यु हो गई है, उस को दफना कर हम आ रहें हैं। तुमने हमें भोजन दिया इसी लिए आज से हम तुम्हारे मित्र हुए और दो घण्टे बाद सात आदमी बस्ते में शकरकन्दू, गट्टा, और रतालू की तरह का कंद मूल ले आए और उबाल कर पहले तोताराम सनाढय को भोजन कराया। फिर बचा हुआ उबला हुआ में से वे कुछ तोता राम के लिए छोड़ गए और कुछ अपने साथ ले गए। यह वो समय था जब कि अपनी पेट काट कर अतिथि सत्कार की परम्परा को कायम रखना पड़ता था।

के. एल. गिलियन

श्री के. एल. गिलियन के अनुसार, जिन्होंने १९६२ (1962) में फीजी के प्रवासी भारतीयों के बारे में पहली किताब लिखी थी और उसे श्री बनारसी दास चतूरबेदी के नाम समर्पित किया था, कुली लैनों के प्रति उनकी साधारण दृष्टि सहानुभूति पुर्ण रही है।

उन्होंने इस प्रकार का विवरण दिया कि कम्पनी के और फीजी सरकार के मध्य सरकारी कागजात है जिसका उन्होंने गहन अध्यन किया है। हर एक बागानों में २ या ३ लैनें होती थी। हर एक में चालिस-पचास भारतीय होते थे। उसके तौर तरीके और न्यूनतम लम्बाई-चौड़ाई कानून द्वारा थी। इनकी छतें टीन की और दीवारें लकड़ी की थी। कोलटा के रंग से इसे काला कर दिया जाता था। १९०८ के बाद बनी घरों पर चौड़ी छतें होती थी और उन में पानी निकलने के नालियाँ होती थी और चौके यह किचन अलग से होते थे। पहले इन के कोठरी १० फीट लम्बे और ७ फीट चौड़े होते थे। लेकिन अब बारह और दस फीट के कर दिए गए। गोबर और मिट्टी का फर्श था और लकड़ी के औजार पर बर्तन और गीले कपड़े फैले रहते थे। इनके साथ ही फैले हुए धुआँ और धूल में खाना होता था। साथ मक्खियाँ और मच्छर भी रहते थे और किसी किसी के यहाँ कुत्ते और मुर्गियाँ भी थी। एक चूल्हा होता था। कमरे में दरवाजे थे पर कोई खिड़कियाँ नहीं थी। हवा के लिए लकड़ी के पटीशन छत तक नहीं थे बल्कि उनके ऊपर छत तक तारों का जाल होता था।

ये लाइने भीड़ से भरी रहती थी। ये गंदी और भद्दी थी। भोजन के लिए अनिवार्य राशन प्रथा थी। बागान मालिक इसे पसन्द नहीं करते थे और ना

मज़दूर ही। १८९१ (1891) तक उनके वेतन में से चार पेन्स और १८९५ (1895) से पाँच पेन्स काटे जाते थे। अगर मज़दूर अपने राशन किसी को दे दें या किसी को खिला दें तो उन्हें भूखा मरना पड़ता था। अगर पता लग जाए तो उन्हें सजा भी हो सकती थी। ये भारत के स्वतन्त्र नागरिक थे। यहाँ ना ज्यादा कमाने की ना खाने और खिलाने की यह माँगने की छूट थी। तीज त्यौहारो के लिए अन्न की कोई व्यवस्था नहीं थी। इससे शारीरिक और मानसिक, दोनों प्रकार के कलेश होते थे।

२६ जून १८८८ (1888) को चीफ मेडिकल अफिसर ने अपनी रिपोर्ट दी कि इस खुराक में प्रोटीन की बहुत कमी है। जिस के फल स्वरुप १८९५ (1895) में अध्यादेश निकाला और मात्रा में सुधार किया गया। यह आवश्यक राशन प्रथम छ: महीने तक सिमित था। इसके बाद शर्तबन्ध मज़दूर अपना खाना स्वयं खरीद सकते थे और जो चाहे बना सकते थे। परन्तु यह इस बात के ऊपर निर्भर था कि वे कितना बचा सकते थे और उनकी शारीरिक अवस्थायें क्या थी।

बच्चों के लिए दूध की कोई व्यवस्था नहीं थी। उन्हें या तो अपनी माँ के दूध पर या अन्न पर आश्रित रहना पड़ता था। परिणाम ऐसा होता था कि ११९३ (1193) में से १००० बच्चे (८४ प्रतिशत) मर जाते थे। यह १९१४ (1914) के एक रिपोर्ट के अनुसार अन्य सभी उपनिवेशों से अधिक था, जहाँ जहाँ शर्तबन्ध मज़दूर भेजे गए थे। श्री गिलियन के अनुसार मुख्य कारण अनुचित भोजन और गन्दगी की स्थिति और जो माताओं को बच्चों को लेकर काम करना पड़ता था। एक कोठरी में एक बुढ़िया को देखरेख के लिए छोड़ जाते थे। ऐसी कोठरियों में मक्खियाँ भरी रहती थी।

सन् १९०१ (1901) में कोलोनियल रिफाइनिंग कम्पनी के मिस्टर थोमस यूनिस भारत गए और उन्हों ने सिफारिस की कि भविष्य में उत्तर प्रदेश से कम से कम मज़दूर लिए जाऐं। सन् १८८१-२ (1881-2) और १८८२-३ (1882-3) में बंगाल बिहार तथा उत्तर प्रदेश में बड़ी अच्छी फसल हुई थी। सन् १८८४-५ (1884-5) में बंगाल में और बिहार में आकाल पड़ा और फीजी के ऐजन्ट को जितनी मज़दूरों की जरुरत थी सारे के सारे भरती हो गये थे। जब जब फसल अच्छी होती थी तो मिस्टर यूनिस मद्रास से मज़दूर भरती करते थे। लेकिन जब उन्हें उत्तर प्रदेश के बिहार के मज़दूर मिलते तो मद्रास वालों को नहीं लेते थे। जो पंजाब के नाम से भरती होते थे, वे दिल्ली शहर और अम्बाला और रोहित जिले के लोग होते थे।

जगन्नाथ दर्शन

कई लोगों को जगन्नाथ दर्शन कराने के बहाने फीजी लाया गया था क्यों कि कलकत्ता से जहाज पर जाया जाता था। १९०६ में वेष्ट इन्डिया कमीटी ने लिखा था कि उन इलाकों से कुलियों की उपलब्धि अधिक होती थी, जहाँ जहाँ जन संख्या अधिक और भूमि कम उपजाऊ थे जैसे गोरखपुर, आज़मगढ़, गोंडा आदि जिला जहाँ से ज्यादा लोग फीजी आए थे।

आगरा और मथुरा ऐसे जिले थे जहाँ पर सिचाई की कोई व्यवस्था नहीं थी। अगर बरसात ठीक नहीं हुई तो आकाल पड़ जाता था और यही हाल अम्बाला और रोहित के जिलाओं का था। मद्रास के लोग प्राचीन काल से समुद्री जहाजों द्वारा श्रीलंका आया जाया करते थे। कितने मज़दूरों को श्रीलंका के बहाने बहका कर फीजी लाया गया था। सन् १९०१ (1901) में गोरखपुर जिले के प्रतिवर्ग मील में ११३७ (1137) लोग रहते थे। जौनपुर में ११२० (1120) लोग रहते थे। खेती नहीं के बराबर थी। पन्द्रह जिलाओं में २२९ (229) रुपये प्रति वर्ष का आया था जब कि देवरिया जिले में केवल एक सौ पचास रुपये थे। सारे भारत में केवल तीन हेक्टर ज़मीन प्रति जोत का पड़ता था।

मदन मोहन मालवीय

श्री मदन मोहन मालवीय ने सन् १९१४ (1914) में केन्द्रिय धारा सभा में शर्तबन्ध मज़दूर प्रथा को बन्द करने का प्रस्ताव करते हुए उल्लेख किया। २६५ (265) जातियों के नाम से लोग फीजी आए थे। फीजी से अपने व्यय पर लौटने वाले भारतीयों की संख्या नीचे दी गई है:

1879 - -	1885 - -
1880 - -	1886 - 1
1881 - -	1887 - 92
1882 - 4	1888 - 74
1883 - 2	1889 - 179
1884 - -	कुल जोड़ 352

केवल ३५२ (352) लोग अपने खर्च से भारत लौट सके थे।

५
हिन्दुओं के लिए कुटी और स्कूल

गिरमिट काल के दुखद समय में भी भारतीय निवासी छः दिन कठिन काम करने के बाद शनिवार के रात और रविवार के दिन में ढोल के जगह खाली बिस्कुट के टीन और बाँस की बाँसुरी बजा कर भजन भाव और सत्संग करते थे। पंडित भगवान दत्त पाँडे शर्तबन्ध मज़दूर हो कर १८६४ (1894) में हरफोइ जहाज नम्बर तीन में फीजी आए थे। उन्होंने अपना कुली काल नौसोरी में काटा। इसके बाद वे बूदी में बसे और वहीं पर एक कुटी बनाई। यह कुटी हिन्दुओं का एक केन्द्र बन गया। इसी कुटी मे साधू गिरवर दास महन्त ने हिन्दु साँस्कृति की शिक्षा देते थे। बाद में यह धार्मिक केन्द्र बन गया था।

बुनिमोनो स्कूल

बुनिमोनो स्कूल सन् १६१६ (1916) में स्थापित हुआ। इस स्कूल के लिए ज़मीन बुनिमोनो के जै श्री साधू ने गन्ना समेत दिया था। गन्ना बेंच कर स्कूल बनाया गया। उस समय केवल आठ दस बच्चे पढ़ते थे। आज करीब (सन् १६८५ (1985) का आँकड़ा) एक हजार तीन सौ छात्र अध्यन करते हैं। उन दिनों अध्यापक श्री राम दीनलाल कमीज और धोती पहन कर पढ़ाते थे। चमड़े की जूती, पेटी और माँस लाना मना था।

सनातन धर्म

देवी (धनिया) का जन्म ग्राम सलेनपुर जिला गाजीपुर उत्तरप्रदेश में हुआ था। पिता का नाम श्री धनई कंहार था। इनके पति भवानी दास और एक मात्र पुत्र सीताराम के गुज़र जाने के बाद, इन्हों ने सनातन धर्म भवन के निर्माण में पूरी मदद दी। अखिल फीजी श्री सनातन धर्म महासम्मेलन के द्वीतिय अधिवेशन

में इन्हीं के धन से पाँच स्वर्ण-पदक (Gold Medal) बालक बालिकाओं को दिए गए थे।

साधू वशिष्ठमुनि

साधू वशिष्ठमुनि के आगमन से फीजी के धार्मिक चेतना ने नया रुप धारण किया। फीजी के लोग इन्हें चमत्कारी पुरुष मानते थे। नावुआ और मंगेरे में वशिष्ठ मुनि की यादगारी में स्कूल चल रहें हैं।

पंडित राम चन्द्र शर्मा

कीर्तन विशारद पंडित राम चन्द्र शर्मा सन् १९३० (1930) ई. में फीजी आए और साढ़े पाँच साल फीजी में रह कर 'फीजी दिगदर्शन' नामक पुस्तक लिखा और १९३५ (1935) में भारत लौटे। श्री जै. आर. पियर्सन ने पंडित राम चन्द्र के विषय में लिखा कि इन्ही के जरिये सनातन धर्मी और आर्य समाजियों में मेल मिलाप हुआ था। इन को फीजी के बा इलाके के लोग मंगाये थे। ये कबीर दास के दोहा कहा करते थे:

मैं तो रहा एक से, एक रहा सब माँहि
मेरा सब, मैं सब का, रहा दूसरा नाहिं।

दक्षिण भारतीय और संगम की स्थापना

दक्षिण भारत के गिरमिट श्रमिक सब से पहले सन् १९०३ (1903) में फीजी पहुँचे। मद्रास से ५९६ (596) यात्री ले कर बाइस मई को एल्बी नम्बर तीन जहाज से चले और पाँच अगस्त सन् १९०३ (1903) को नुकुलाऊ डिपो पर उतरे। आठ व्यक्ति मर गए और दो पैदा हुए। इस प्रकार ५९० (590) लोग फीजी पहुँचे।

साधू कुपु स्वामी

स्वामी विवेकानन्द के जन्म दिवस के उपलक्ष्य में हुई सभा में संगम की स्थापना दस जनवरी सन् १९२६ (1926) में हुई। 'रा' जिले के साधू कुपु स्वामी और गोपाल मुदलियार उस समय के प्रमुख नेता थे। कुपु स्वामी मद्रास में एक पुलिस सिपाही थे। फीजी आकर उन्होंने मानव मात्र की सेवा में ऐसे लगे कि उन्हें 'सेवक रत्न' की उपाधि दी गई।

अविनाशानन्द

अविनाशानन्द ने फीजी में सर्वप्रथम संगम की स्थापना का कार्य किया। नान्दी संगम स्कूल का उद्घाटन ९ फरवरी सन् १९३० (1930) को हुआ था। दक्षिण भारतीय गिरमिटियों ने नान्दी में सब से पहले सुब्रमण्यिम का मन्दिर बनवाया।

पंडित रामचन्द्र शर्मा ने अपनी पुस्तक 'फीजी दिगदर्शन' में लिखा है कि जिस दिन से महा संगम की स्थापना हुई, उसी दिन से दक्षिण भारतीय लोग उत्तर भारतियों के साथ किसी कार्य में इस सभा की स्वीकृति के बिना भाग नहीं लेते थे। फीजी में मुसलमानों की संख्या भी कई हजार थी। मुसलमानों के दो फिरके अलग अलग संस्थायें बना कर कार्य कर रहे थे; मुहम्मदी जमात और अहमदिया (कादियानी)।

आर्य समाज

भारतीय सुधार सभा की स्थापना सन् १९२४ (1924) ई, में सूवा में हुई। यह संस्था भारतीय युवकों में सामाजिक एकता, सुधार भावना और खेलों के प्रति उत्साह को प्रोतसाहित करती थी।

श्री तोताराम सनाढ्य ने अपनी पुस्तक 'फीजी द्वीप में मेरे एक्कीस वर्ष' के पृष्ठ पैंतीस ३५ पर लिखा है:

> 'श्री राम मनोहरानन्द सरस्वती नामक एक आर्य समाजी सज्जन वहाँ गए हुए हैं और उन्हों ने वहाँ प्रचार का काम भी किया है। वे धन्यवाद के पात्र हैं। पर वहाँ ऐसे उपदेशक की अत्यन्त आवश्यकता है जो वैदिके सिद्धान्तों का ज्ञाता हो आरै अच्छी तरह अंग्रेजी भी जानता हो। धर्म का प्रचार करना बड़ी टेढ़ी खीर है। इसके लिए सैकड़ों कष्ट सहने पड़ते हैं और इस कार्य में बड़े साहस, आत्म बल, शारीरिक शक्ति, धैर्य और सहिष्णुता की आवश्यक्ता है। हम यह जानते हैं आर्य समाज के ऊपर काफी बोझ रक्खा हुआ है और आर्य समाज अपने प्रवासी भाइयों के लाभार्थ क्या एक उपदेशक भी फीजी नहीं भेज सकता? हमें पुर्ण आशा है कि फीजी के हिन्दू लोग यहाँ से भेजे हुए उपदेशकों को तथा शक्ति सहायता करेंगे।'

यह विचार १९१४ (1914) से पूर्व की स्थिति के विषय में है। आर्य समाज के लोग सामाबूला में मंदिर और स्कूल के लिए १९०८ (1908) में ज़मीन खरीदे। १९१८ (1918) में गुरुकुल स्कूल लौतोका के लिए स्थान बना और उस का पंजीकरण भी करा दिया गया।

डाक्टर मनीलाल

डाक्टर मनीलाल के प्रयत्न से फीजी की आर्य प्रतिनिधि सभा धार्मिक संस्था के रूप में पंजीकृत हुई। यह सभा दिल्ली की सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध थी।

पंडित गोपेन्द्र नारायण पथिक

वृन्दावन भारत के गुरुकुल से पंडित गोपेन्द्र नारायण पथिक सन् १९२५ (1925) में उपदेशक के रूप में फीजी आए और उन्हों ने फीजी से बालकों को शिक्षा के लिए भारत भेजने की योजना चालू किया। यह कार्य सन् १९३४ (1934) तक चलता रहा।

पंडित श्री कृष्णा शर्मा

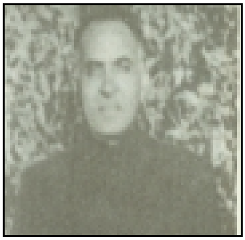

राजकोट से पंडित श्री कृष्ण शर्मा सन् १६२६ (1926) में फीजी पहुँचे। उनका व्यक्तित्व आकर्षक था। वे वक्ता और गायक भी अच्छे थे। उन्हीं के प्रयास से फीजी में शुद्धि संस्कार का कार्य आरम्भ हुआ। उन्ही के प्रयत्न से सामाबूला सूवा के दयानन्द कोलेज और नाँदी आर्य मंदिर की स्थापना हुई। वे सन् १६२६ (1929) में फीजी से चले गए।

पंडित अमीचन्द्र

पंडित अमीचन्द्र सन् १६२७ में फीजी पहूँचे और उन्होंने मृत्यु प्रयन्त सन् १६५४ तक आर्य समाज की बड़ी लगन के साथ सेवा की। कन्याओं की शिक्षा का कार्य उन्ही के प्रयास से आरम्भ हुआ। दयानन्द कोलेज के वे प्रथम प्रधानाचार्य थे।

ठाकुर कुन्दन सिंह कुश

ठाकुर कुन्दन सिंह कुश सन् १६२८ (1928) में अध्यापक के रूप में फीजी आए और उन्होंने आर्य स्काउट की नींव डाली।

पंडित मेहता जैमिनी

पंडित मेहता जैमिनी सन् १६२८ (1928) में पहूँचे। उन्होंने वेद और हिन्दू संस्कृति के निमित संसार के अनेक देशों में प्रभावकारी प्रचार किया। वे आर्य धर्म विचार और साहित्य पर अंग्रजी में भाषण करते थे।

महात्मा आनन्द स्वामी

सन् १६६६ (1966) में महात्मा आनन्द स्वामी ने फीजी की यात्रा की और वे वैदिक धर्म की व्याख्या बड़े अच्छे ढंग से किया।

आचार्य ऊर्षबुद्ध

सन् १९७२ (1972) में आचार्य ऊर्षबुद्ध फीजी में तीन महीने रहे और उन के वैदिक साहित्य ज्ञान से फीजी वासी चमत्कृत हो गए। वे हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में भाषण करते थे।

विष्णुदेव

प्रमुख कार्य आर्य समाज ने फीजी में शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करने में की। सन् १९१९ (1919) में जिला कमिश्नर ने गुरुकुल स्कुल का उद्घाटन किया था। यह सभी जिलाओं के सहयोग से बना था।

सन् १९७२ (1972) में विष्णुदेव मेमोरियल स्कूल की स्थापना हुई। यह पंडित विष्णुदेव जनरल की स्मृति में बनाया गया। वे फीजी में आर्य समाज के विशेष स्तम्भ थे। वे तीस वर्षो तक फीजी विधान परिषद के सदस्य थे।

आर्य समाज के स्कूल

स्कूल	**प्रार्थमिक**
गुरुकुल सवेनी, लौतोका	1918
बुनिमोनो आर्य स्कूल, नौसोरी	1930
आर्य समाज कन्या स्कूल, सामाबूला, सूवा	1930
आर्य समाज कन्या पाठशाला, बा	1938
भवानी दयाल मेमोरियल, वाइनीबूकू, नसीनू	1942
नन्दूना आर्य पाठशाला, लम्बासा	1943
स्वामी श्रद्धानन्द मेमोरियल स्कूल, सामाबूला	1952
वुनिवाकालूआ आर्य स्कूल	1952
डी. ऐ. वी. प्राइमरी स्कूल, बा	1956
कोरोतारी आर्य पाठशाला, लम्बासा	1961
वाइनीकोरो आर्य पाठशाला, लम्बासा	1963
पंडित विष्णुदेव मेमोरियल स्कूल, सुवा	1970

हाई स्कूल और कोलेज:

स्कूल	**प्रार्थमिक**
डी. ऐ. वी. यूवक (बोइस) कालेज, सामाबूला	1952
डी. ऐ. वी. यूवती (गेल्स) कालेज, सामाबूला	1952
डी. ऐ. वी. हाई स्कूल, बा	1953
विष्णुदेव मेमोरियल, लौटोका	1972
भवानी दयाल मेमोरियल, वाइनीबूकू	1973
आर्य हाई स्कूल, नन्दूना, लम्बासा	1973

इसके अलावा कुछ जिलाओं में आर्य समाज के मंदिर भी हैं।

श्री वेद पाल

सुलतान पुर निवासी वेद प्रचारक श्री वेद पाल दो वर्ष से कुछ अधिक समय फीजी में रह कर ७ सितम्बर १९८० (1980) को भारत लौटे। उनका कहना था कि कई आर्य समाज स्कूलों में सप्ताह में तीन दिन हवन, धर्म कथा तथा संगीत के आयोजन होते हैं। फीजी के मूल निवाली वैदिक धर्म अपना रहे है। कुछ काईवीती साँई बाबा के अनुयायी बन रहे हैं और कुछ बाल योगेश्वर के।

फीजी में रेडियो पर धर्म प्रचार में कोई रोक टोक नहीं हैं। आर्य समाज को साल में ५२ (52) प्रोग्राम मिलता है। सब से अधिक प्रोग्राम सनातन धर्म सभा को मिलता है और उनकी संख्या सब से अधिक है। कबीर पंथियों को वर्ष में १२, मुलसमानों तथा सिक्खों को ३०-४० तक कार्यक्रम दिये जाते हैं।

६
गिरमिट विरोध

जब भारतीय लोक मानस में चेतना आई तब उसने संकल्प किया कि चाहे जो कुछ भी हो, गिरमिट प्रथा के कलंक को भारत से हटाना ही होगा। इस संकल्प की सिद्धी तब हुई जब १ जनवरी १९२० (1920) ई. फीजी और अन्य उपनिवेशों को शर्तबन्धी भारतीय कुली भेजना कानूनन रोक दिया गया।

पीड़ितों के घर में ही जो त्राता प्रकट हुए, उनके नाम थे बर्टन और डडली; एक नर और दूसरी नारी। इनकी पुस्तक और लेख ने मानवीय वेदना को स्वर दिया। इसी स्वर ने धीरे धीरे ऐसी बुलन्द आवाज़ का रुप धारण किया कि ब्रिटिश साम्राज्य के बड़े बड़े कर्णधार किंकर्तव्य-वमूढ़ हो गए।

प्रथम महायुद्ध से पहले वायसराय को बताया गया था कि १८५७ (1857) भारतीय विद्रोह के बाद ऐसा आन्दोलन अभी तक नहीं हुआ जैसा शर्तबन्ध कुली प्रथा के विरुद्ध हो रहा है। गिरमिट विरोधी आन्दोलन के परिणाम स्वरूप प्रवासी भारतीय नेता जीवन संकट में पड़ गए। देश विदेशों में अनेक बहसें चली, निर्णय की पूर्ति और विकल्प की खोज की तना तनी में पाँच वर्ष यूँ ही निकल गए। गोरों के स्वार्थ और कालों के सम्मान का संघर्ष कदम कदम पर छिड़ा। अंत में सत्य विजयी रहा।

श्री हियू टिंकर का कहना है कि गिरमिट प्रथा का अन्त भारतीय लोक मत के भड़क उठने से हुआ और वही उग्र लोक मत पश्चिमी प्रभुता का अगुआ हो गया।

पादरी जे. डब्ल्यु. वार्टन

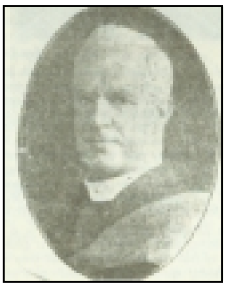

ओस्ट्रेलिया मेथोडिस्ट चर्च के पादरी जे. डब्ल्यु. वार्टन धर्मप्रचार के लिए सन् १९०२ में फीजी आए और १९१० तक वे फीजी में रह कर धर्म के साथ शिक्षा भी देते थे। शिक्षा के कारण बागानों के लोग

उनसे नफरत करते थे। अपनी पुस्तक 'द फीजी ओफ टुडे' में लिखा था। पादरी वार्टन ने पाँच पुस्तके लिखी थी। श्री तोता राम सनाढय ने अपनी पुस्तक 'फीजी द्वीप में मेरे २१ वर्ष' में पादरी वार्टन के बारे में पृष्ट ४५ (45) पर लिखा कि श्री वार्टन ने प्लान्टरों के विरुद्ध सच्ची बातों को बड़े साहस के साथ लिखा था। पादरी वार्टन के पाँच पुस्तक थे:

1. मोर्डन मिशन्स इन द साउथ पेसिफिक, लन्डन १९४९ (1949)
2. अवर इन्डियन वेकर इन फीजी, सूवा १९०९ (1909)
3. द फीजी ओफ टुडे, लन्डन १९१० (1910)
4. द कोल ओफ द पेसिफिक, लन्डन १९१४ (1914)
5. अ हन्ड्रेड इयर्स इन फीजी, लन्डन १९३६ (1936)

पाँचवी पुस्तक के लेखन में उनके सहयोगी थे डब्ल्यु डीन।

तोता राम जी बार्टन साहब की इस पुस्तक का अनुवाद करना चाहते थे परन्तु नहीं कर सके। यह बात उनके मन में ही रह गई। वैसे उन्होंने पादरी साहब की पुस्तक से अनेक उदाहरण अपनी पुस्तक में दी है। श्री बार्टन ने अपनी पुस्तक के पृष्ट ३३८ (338) पर तोताराम जी का जिक्र करते हुए उन्हें स्पष्ट विचार और शाँतिपूर्वक बहस करने वाला हिन्दू कहा है। बार्टन साहब ने अपनी पुस्तक के चौदहवें अध्याय 'पाँच वर्ष का कठोर श्रम' में भारतीय कूलियों पर होने वाले अत्याचार के अनेक उदाहरण दे कर सरकारी कानून, प्लान्टरों और ओवरसियरों के अमानुषिक व्यवहार पर काफी प्रकाश डाला।

पादरी बार्टन की एक पुस्तक का प्रकाशन १९१० में हुआ। इस प्रकाशन के कुछ समय पूर्व ही वे फीजी छोड़ कर चले गये थे। फीजी में पुस्तक का घोर विरोध हुआ पर यहाँ के अधिकारियों ने पुस्तक के लेखन के विरुद्ध कुछ ना कर सकने से अपनी असमर्थता प्रकट की। श्री के. एल. गिलियन के (पृष्ठ १६७) के अनुसार फीजी के गर्वनर सर हेनरी ने १९ जुलाई १९११ को पुस्तक के विरोध में स्मरण-पत्र प्रकाशित किया। लन्डन और भारत में पुस्तक का विरोध नहीं हुआ। लन्डन के साप्ताहिक पत्र 'इन्डिया' में पुस्तक का विस्तृत परिचय सन् १९१२ में छपा। भारत के सी. एफ. एनड्रुज़ ने जब इस पुस्तक को पढ़ा तब उनका फीजी की समस्याओं के प्रति विशेष आकर्षण हुआ। श्री एन्ड्रुज़ ने लेखक को पत्र लिखा और कहा:

'मैं वास्तव में इस बात को विशेष रूप से अनुभव कर रहा हूँ कि फीजी के बारे में आप की पुस्तक प्रथम थी और उसका कार्य भी विशेष रहा। सभवता: केवल इसी पुस्तक ने पहली बार शर्तबन्ध कुली प्रथा पर उचित रोशनी डाल कर उसे जग जाहिर किया है'

फीजी के भारतीय आव्रजक गिलियन ने पृष्ठ १७८ (178) पर कहा कि भारत में कुली प्रथा के आलोचकों ने अपने तर्कों को पुष्ट करने के लिए इस पुस्तक का खूब उपयोग किया।

श्रीमती डाक्टर रेखा चतुर्वेदी ने फीजी द्वीप पर अपने शोध प्रबन्ध में लिखा है कि रेवरेन्ड बार्टन का जन्म योर्कशायर के लेजनबी नामक स्थान पर १८७५ (1875) में हुआ। आठ वर्ष की अवस्था में वे न्युज़ीलेन्ड गए और बाइस (22) वर्ष की अवस्था से ही वे धार्मिक सेवा में लग गए। १९०२ मे वे फीजी भेजे गए। १९१४ तक उन्होंने फीजी में धर्म प्रचार का कार्य किया। आगे चल कर वे न्यु साउथ वैल्स सम्मेलन के अध्यक्ष के पद पर (१९४५-४८)(1945-48) रहे।

कुमारी हेना डडली

कुमारी हेना डडली अस्ट्रेलिया मेथोडिस्ट मिशन की ओर से पहली महिला फीजी द्वीप पर इसाई धर्म प्रचार करने अक्तूबर १८९७ (1897) ई. में आई थीं। यहाँ आने से पूर्व कई वर्षो तक भारत में कार्य कर चुकी थी। इन्हें हिन्दुस्तानी स्त्रियों और भाषा का पूरा ज्ञान था। इन्होंने हिन्दुस्तानी स्त्रियों के दुख पर बहुत कुछ लिखा है। इन्हों ने असहाय बच्चियों का पालन पोषन भी किया। स्त्रियाँ इन्हें माता कहती थी। डडली नाम से लड़कियों का स्कूल भी चल रहा है। वे १९१३ में चली गई। इनका फीजी पर लेख लन्डन से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक इन्डिया के सन् १९१२ के दिसम्बर वाले अंक में छपा था। यह पत्र भारतीय काँग्रेस की ब्रिटिश कमेटी की ओर से प्रकाशित होता था। इस पत्र का प्रकाशन १८८७ (1887) से आरम्भ हुआ। सर्व श्री ऐ. ओ. हियूम और विलियम वेडर्बेन इसके प्रकाशक और सम्पादक थे। इन दोनों

भारत हितैषियों ने अपने गाँठ से पैसा लगाया था। विलियम वेटर्बेन का निधन सन् १९१८ (1918) में हो गया। सम्भवता: तब ही पत्र का प्रकाशन भी बन्द हो गया।

सन् १९१० में पादरी बार्टन की पुस्तक फीजी ओफ टुडे प्रकाशित हुई थी। उनकी पुस्तक का साराँश 'इन्डिया' के उस अंक में छपा था जिसमें कुमारी हेना डडली का पत्र छपा था।

सी. एफ. एन्डुज़

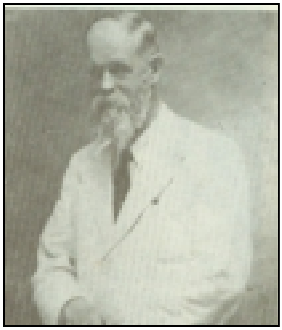

इंगलेन्ड के न्युकासल आयनटाइन नगर में १२ फरवरी सन् १८७१ (1871) को चार्ल्स फ्रीअर एन्डुज़ का जन्म हुआ था। इनके पिता जोन एडविन और माता मेरी शारलोट थी। ये अपने माता पिता के चतुर्थ सन्तान थे। एन्डुज़ ने केम्ब्रिज विश्वविध्यालय में उच्च शिक्षा प्राप्त की। इन्हें युनानी और लातौनी भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था। संगी साथी इन्हें 'चाली' कहते थे। चाली अपने बाबा और पिता की तरह संसार के सुखों को त्याग कर ईश्वर की सेवा में जीवन बिताना चाहते थे। सन् १८९५ (1895) में इंगलेन्ड के उत्तर-पूर्वी किनारे के गरीब जहाजी नगर में गए। माता पिता के आज्ञा विरुद्ध इसाई धर्म के प्रचारार्थ वे २० मार्च सन् १९०४ को बम्बई पहुँचे। दो वर्ष बाद एन्डुज़ की निगाह लाहौर के अंग्रेज़ी दैनिक पत्र 'सिविल और मिलिटरी गज़ेट' पर पड़ी। यह पत्र भारतीयों के विरुद्ध विष भरे लेख छापता था। इस प्रकार के झूठे प्रचार देख कर इन्हों ने खन्डन के लेख लिखें। 'हिन्दुस्तान रिव्यु' में उनका जो लेख सन् १९०६ में छपा, उस से भारतीय शिक्षित वर्ग उनकी ओर आकर्षित हुई। वह आपसी आकर्षण ऐसा बढ़ा कि एन्डुज़ राष्ट्रीय आन्दोलन के पक्के पक्षधर हो गए और सन् १९०७ तक तो विद्रोही हो गए।

सन् १९१२ में इंगलेन्ड में एन्डुज़ की मुलाकात रविन्द्रनाथ ठाकुर (टेगोर) से हुई। यह मैत्री जीवन भर अच्छी तरह निभी। श्री गोखले की आज्ञा लेकर १ जनवरी १९१४ को डर्बन पहुँचे। जहाज पर ही गाँधी जी उनको लिवाने आए। वही जहाज पर पहली बार एन्डुज़ ने गाँधी जी को देखा और झुक कर उनके

पैर छुए। यह मित्रता जीवन पर्यन्त बनी रही। यहीं से प्रवासी भारतीयों की समस्याओं के प्रति उनकी रुचि बढ़ी। दक्षिण अफ्रीका के स्थान पर एन्ड्रुज़ फीजी के प्रवासी भारतीयों की समस्याओं में अधिक रम गए।

सन् १९१५ में भारत छोड़ने से पहले श्री एन्ड्रुज़ ने इलाहाबाद से लेकर कलकत्ते तक के हर एक महत्वपुर्ण आव्रज डिपो का दौरा किया। पेशेवर अरकाठियों के तौर तरीकों की जाँच की। उनका अनुमान था कि भरती में 80 प्रतिशत धोखादारी की जाती थी। सन् १९१७ में जब उन्हों ने फीजी की यात्रा की तब उन्हें पहली बार 'दीनबन्धु' कह कर सम्बोधित किया गया। इससे पूर्व सन् १९१५ में वे फीजी आए थे। सन् १९३६ (1936) में वे तीसरी बार फीजी आए। इन यात्राओं के दौरान वे गरीब से गरीब हजारों प्रवासी भारतीयों, सरकारी अधिकारियों और प्लान्टरों से मिले और हर बार इन्हों ने फीजी के बारे में अपनी रिपोर्ट लिखी। इन की स्मृति में सूवा फीजी में दीन बन्धु स्कूल की स्थापना सन् १९५१ (1951) में की गई।

२२ मार्च सन् १९१६ को श्री मदन मोहन मालवीय के प्रस्ताव के उत्तर में भारत के वायसराय हार्डिन्ग ने यह घोषणा की कि शर्तबन्धी प्रथा समाप्त की जाती है। यह सब दीनबन्धु एन्ड्रुज़ के ही द्वारा हुआ था। इनके साथ रहने वाले श्री डब्लू. डब्लू. पियर्सन भी फीजी आए थे।

अंग्रेजी के पत्र 'हेरल्ड' ने ६ फरवरी १९१८ (1918) के अंक में लिखा था: 'आश्चर्य तो इस बात का है कि अस्ट्रेलियन लोग इस आदमी की गर्दन पकड़ कर फीजी से क्यों नहीं निकाल देते'।

उन्ही दिनों फीजी टायम्स ने लिखा था:

> 'मिस्टर एन्ड्रुज़ की रिपोर्ट क्या है? किसी घनचक्कर को धोखा देने वाले उद्गार, आप की दुर्भाग्यपुर्ण आदत यह है कि प्रवासी भारतीयों को भलाई करने की जोश में अपनी विवेक, बुद्धि से हाथ धो बैठते हैं। यह नाम मात्र के मिशनरी महाशय हिन्दुस्तानियों के सहायक बने फिरते हैं और अपने बड़प्पन के नशे में चूर हैं।'

श्रीमान् दीनबन्धु एन्ड्रुज़ ने सन् १९१५ से सन् १९३७ (1937) के बीच चार पुस्तकें और कई अंग्रेजी कवितायें लिखी। इन्हों ने कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले मासिक 'मोर्डन रिव्यु' में सन् १९०८ से सन् १९२२ तक फीजी पर अनेक लेख लिखे।

तोताराम सनाढ्य

शर्तबन्ध कुली श्री तोता राम सनाढ्य का नाम विशेष उल्लेखनीय है। फीजी से भारत जाकर श्री तोताराम ने अनुबन्ध प्रथा के विरुद्ध घोर आन्दोलन किया। इन्हों ने देश के कई नगरों में जाकर कुली प्रथा के विरुद्ध जनता को सजग किया और आवाज़ उठाने की प्रेरणा दी। सन् १९१४ में फीजी के प्रतिनिधि के रूप में इन्हों ने काँग्रेस के मद्रास अधिवेशन में भी भाग लिया। हरिद्वार के कुम्भ मेले में कुली प्रथा और अरकाठियों के विरुद्ध लगातार १२ दिनों तक प्रचार करते रहे।

सन् १९१४ से सन् १९२० तक तोता राम जी फिरोज़ाबाद में रहे। उसके बाद पंडित बनारसी दास चतुर्वेदी ने उनकी भेंट महात्मा गाँधी से कराई और वे साबरमती आश्रम के वासी हो गए। १६ जनवरी १९४८ (1948) को साबरमती आश्रम में उनका देहान्त हो गया।

भारत सरकार की ओर से लोर्ड कर्जन और लोर्ड हार्डिंग ने इस प्रश्न को उठाया। माल और कृषि विभाग के छोटे अफसर श्री आर. इ. आरबुथ नाट ने उपनिवेशों को शर्तबन्द कुली भेजना महत्वहीन बताया। जनता की आवाज़ को गुंजाने वाले थे सर्व श्री मोहन दास कर्म चन्द गाँधी, गोपाल कृष्ण गोखले, पंडित मदन मोहन मालवी, दीनबन्धु एन्ड्रुज़, तोता राम सनाढ्य और बनारसी दास चतुर्वेदी आदि। सित्रयों में श्रीमती सरोजनी नायडू, डेडली आदि।

आसाम के भूतपूर्व चीफ कमीश्नर और भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के प्रधान सर हेनरी कार्टन शर्तबन्ध कुली भेजने की प्रथा के विरुद्ध थे। उन्हों ने सदैव काँग्रेस की नीति का समर्थन किया था। दिसम्बर सन् १९०६ के अधिवेशन में काँग्रेस इस कुली प्रथा को पूरी तरह समाप्त करने का प्रस्ताव स्वीकार किया था। ९ सितम्बर सन् १९०९ को बम्बई के टाउन होल में सार्वजनिक सभा में, श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने उपनिवेशों में जारी शर्तबन्ध कुली प्रथा के विरुद्ध प्रस्ताव रखा था। फरवरी १९१० में भारतीय विधान परिषद् में शर्तबन्ध कुलियों के भरती के विरुद्ध श्री गोखले ने प्रस्ताव रखा कि केवल प्रार्थना पत्रों से काम नहीं चलेगा। अब तो जवाबी हमला करने का समय है। ४ मार्च सन् १९१२ को श्री गोखले ने दुबारा फिर प्रस्ताव रक्खा और कहा कि जब तक सफलता नहीं मिलती तब तक बार बार इस प्रस्ताव को रखा जाएगा।

चिम्मनलाल अग्रवाल

अंत में सात अकतूबर सन् १९१२ को खुर्जा के युवक व्यापारी चिम्मनलाल अग्रवाल को फीजी भेजने का निश्चय हुआ। सितम्बर सन् १९१३ में मेकनील चिम्मनलाल की जाँच समिति फीजी पहूँची। इन्हों ने उल्टी की कि कुली प्रथा को जारी रखने में लाभ अधिक है। इसी वर्ष स्थिति और बिगड़ गई। यहीं से श्री गाँधी जी के नैतृत्व में शर्तबन्ध कुलियों का सत्याग्रह आरम्भ हो गया। सन् १९१५ तक अनेक संस्था कुली प्रथा नष्ट करने के लिए बने।

श्री निवासन शास्त्री की राय थी कि श्रमिकों को बाहर भेजना बिल्कुल ही बंद न किया जाए। श्रमिकों को बाहर भेजने के लिए भरती का काम सन् १९१७ में समाप्त हो गया। २ जनवरी १९२० को फीजी के लगभग ५२ हजार मज़दूर मुक्त हुए।

नैटाल से शर्तबन्द श्रमिकों की भरती जून सन् १९११ से बंद हो गई थी। श्री हिल और श्री बेंटसन की गवाहियों से पता चला कि संरक्षक और मेजिस्ट्रेट प्लान्टरों के हितों के रक्षक थे लेकिन कूलियों के लिए नहीं। श्री हिल सच्चे अंग्रेज साबित हुए। इन्हें काम पर से निकाल दिया गया था, लेकिन श्री हिल को हरजाना के रूप में २११ (211) हजार पौंड पैसा देना पड़ा था।

आत्महत्या के आँकड़े

सन् १९१२ के समाप्त होने वाले दशक में, दस लाख प्रवासी भारतायों में से १०७३ (1073) लोगों ने फीजी में आत्महत्यायें की। इन में स्वत्रंत हुए भारतीय १४७ (147) और गिरमिट आधीन ९२६ (926) थे। यह सब से अधिक फीजी में हुआ था। नीचे दिए जा रहे आँकड़े सन् १९२१ समाप्त होने वाले दशक के आँकड़े हैं।

उपनिवेश	स्वत्रंत	गिरमिट
फीजी	147	926
ट्रीनिडाड	134	400
ब्रिटिश गयाना	52	100
जमैका	-	396
डच गयाना	49	91

भारत में इसी दशक सन् १९०२-१९१२ के दौरान आत्महत्या करने वालों की संख्या इस प्रकार रही:

बम्बई नगर में	107
बाकी बम्बई में	75
मद्रास में	45
संयुक्त प्रान्त में	63
शेष भारत में	51

संयुक्त प्रान्त, मद्रास, मध्य प्रदेश और आसाम की प्रान्तीय सरकारों की राय थी कि गिरमिटिया आव्रजन की व्यवस्था को एक दम समाप्त कर दिया जाए। बम्बई सरकार के विचार स्पष्ट नहीं थे।

यह बात सन् १८३४ (1834) ई. की है। उस समय ब्रिटिश उपनिवेशों के गोरे पूँजी पतियों ने दासत्व प्रथा के नष्ट होने से और हानि को मध्य नजर रख कर गिरमिट प्रथा को चालू किया था और इस से भारत वासियों के प्रति घोर अन्याय किया गया। कुली भरती करने के लिए स्थान स्थापित किए गए जिससे बच्चे भगाने की तथा अन्य भयंकर कुरीतियाँ उत्पन्न हो गई। इस दोष को दूर करने के संशोधन में सन् १८९३ (1893) में कुली भरती करने का विधान बन गया जिस से कुली भरती करना और सुलभ हो गया था।

सन् १९०८ तक प्रवासी भारतीयों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। सन् १९०९ ई. में लोर्ड क्यु ने एक कमेटी नियुक्त की ताकि भारत तथा उपनिवेशों में इस प्रथा द्वारा होते लाभ का पता लगाया जा सके।

सन् १८९०(1890) ई. तक भारतीय प्रजा प्रवासी भारतियों की दशा से बिल्कुल अपरिचित थी, जब तक श्री गाँधी जी ने इस प्रथा के दोषों की पोल ना खोलनी आरम्भ की। सन् १९१० (1910) ई. में स्वर्गीय श्री गोखले ने नैटाल उपनिवेश के लिए कुली भरती करने की प्रथा का अन्त करने का प्रस्ताव रक्खा था। उसी समय भारत सरकार उनकी बात मान कर नैटाल के लिए कुली भेजने की प्रथा को बन्द कर दिया। दो वर्षों बाद श्री गोखले ने सारे भारत वासियों को बताया कि 'यह प्रथा न्याय तथा मानवता के सिद्धान्तों के एक दम विपरीत है, तथा जो राष्ट्र इसे स्वीकार करता है, उसकी सभ्यता के ऊपर अमिट कलंक है।'

फीजी आने वाले भारतियों को यह बतलाया जाता था कि कम से कम

बारह आने प्रतिदिन मिलेंगे किन्तु उन्हें नहीं बतलाया जाता था कि भारत में बारह आने का जो मूल्य था, फीजी के पाँच आने के बराबर था। जैसे कहा गया कि सन् १९०८ से १९१२ तक आत्महत्याओं की संख्या कुलियों में प्रत्येक १,०००,००० में ९२६ (926) थी जब की अन्य जन्म संख्या में केवल १४५ (147) थी, मद्रास तथा संयुक्त प्रान्त में जहाँ से अधिकाँश कुली भरती किए जाते थे, आत्महत्याओं की संख्या केवल ४५ (45) और ६३ (63) थी। मनुष्य-हत्या के सम्बन्ध में श्री एन्ड्रुज़ तथा पीयर्सन का कथन है 'तीन सौ मनुष्य पीछे एक मनुष्य की अथवा दस लाख जन संख्या में ३३३ मनुष्यों की हत्या यहाँ साधारण बात थी। इसकी अपेक्षा मद्रास तथा संयुक्त प्रान्त में मनुष्य हत्या औसत दस लाख पीछे चार था।' आगे चल कर श्री एन्ड्रुज़ तथा पीयर्सन ने कहा है कि 'यह बात ध्यान देने योग्य है कि हत्या अधिकाँश मामलों में स्त्रियों की होती है। इसके विपरीत फीजी में सब आत्महत्या पुरुषों में हुई है। भारत में जो थोड़ी सी आत्महत्यायें हैं, वे स्त्रियों की हैं।' इन्हों ने कहा ९० (90) प्रतिशत भिखारी और ७८ (78) प्रतिशत पागल फीजी में भारतवासी थे। १९१० ई. में मोरिशस को कुली भेजना रुका।

श्री एन्ड्रुज़ ने जो रिपोर्ट भेजा था उसमें निम्न प्रकार के सुझाव थे:

(1) जो व्यक्ति अभी तक शर्तबन्धी के अंतर्गत काम कर रहे हैं उनकी बाकी की अवधि जल्द से जल्द समाप्त कर दिया जाए।

(2) मिल केन्द्रों पर कुली लाइनों का पुना: निर्माण हो जिस से विवाहित श्रमिकों को गोपनीयता और अलगाव मिल सके।

(3) मिल केन्द्रों के अस्पतालों की देखरेख ओवरसियर मेट्रन करें।

(4) भविष्य में होने वाली नियुक्तियों में यह ध्यान रखा जाए कि खेतों में काम करने वाली स्त्रियों के दल का ओवरसियर अविवाहित युवक ना हो।

(5) भविष्य में होने वाली नियुक्तियों में यह ध्यान रखा जाए कि मेट्रन होने पर किसी भारतीय अस्पताल का अधिकारी किसी अविवाहित युवक को ना सौंपा जाए।

(6) उस भारतीय महिला को अपनी शर्तबन्धी की अवधि में कटौती करने की छूट दी जाए जिसके पति का शर्तबन्धी समय पूरा हो गया हो।

(7) कुली लाइन के किसी बालक को, १५ वर्ष की आयू होने पर, बिना उसकी रजामन्दी के, शर्तबन्धी के प्रथा के अधीन काम करने को बाध्य ना किया जाए।

इन बातों को जब उन्हों ने फीजी के गर्वनर के पास भेजा तब पाँच सुझावों को मान लिया गया और नम्बर ६ तथा नम्बर ७ सुझावों पर विचार करने को मज़बूर हुआ। इसी समय आश्वासन भी मिल गया कि किसी भी उपनिवेश में आव्रजको को ऐसे काम पर नहीं लगाया जाएगा जो उनके जातिगत विचारों अथवा धार्मिक विश्वासों के कारण घृणित माना जाता हो और फीजी के भारतीय आब्रजकों की शिक्षा का प्रबन्ध सरकार और मिल मालिक के तरफ से हो।

मैं यह और बात बता दूँ कि फीजी सरकार अपने यहाँ के भारतीय स्कूलों के लिए योग्य अध्यापक प्राप्त करने के लिए लिखा पढ़ी की। इस बात पर भी बल दिया गया कि फीजी के विधान परिषद के संविधान में परिवर्तन कर के एक स्थान उस भारतीय को दिया जाएगा, जो ब्रिटिश नागरिक होने के साथ साथ सरकारी पदाधिकारी होगा।

बदरी महाराज

बदरी महाराज को पहला परिषद का सदस्य नियुक्त किया गया। वे पुराने शर्तबन्धी में आए भारतीय थे और उन्हों ने फीजी मे काफी जायदाद प्राप्त कर लिया था। इन्हों ने फीजी की भारतीयों के अच्छे स्वास्थ, विवाह के कानून में आवश्यक परिवर्तन और विवाहित श्रमिकों को अलग क्वाटर्स दिए जाने की सूचना दी थी।

पश्चिमी अस्ट्रेलिया की संस्था 'विमन क्रिश्चन टेम्परन्स यूनियन' की दो महिलायें, एक अध्यापिका और दूसरी नर्स के रूप में मदद करने के लिए फीजी आई।

सन् १८८० (1880) मे कोलोनियल शुगर रिफाइनिंग कम्पनी ने नौसोरी में चीनी मिल बनाई और सन् १८८३ (1883) में बा के पास रारावाई में। जब सन् १६२० में गिरमिट प्रथा समाप्त हुई, तभी इन लोगो की सहनशक्ति, दो हड़तालों के रूप में फूटी।

३१ जुलाई सन् १६१२ को बम्बई में एक सभा हुई जिसकी अध्यक्षता शैरिफ सर जमरोद जी. जी. बाई ने की और उस सभा में दक्षिण अफ्रीका,

केनडा और ब्रिटिश सामराज्य के अन्य भागों से भारतीयों को नीचा समझ कर उनके साथ बुरे व्योहार की निन्दा की गई। भारत सरकार की इस लिए आलोचना की गई कि उसने श्री गोखले के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया और दक्षिण भारत में महात्मा गाँधी ट्रान्सवाल में जो असहयोग आन्दोलन चालू करना चाहते थे उसके लिए ५००० पौड श्री रतन दादा ने दान में दिए।

श्री चिम्मनलाल

उसी समय खुर्जा उत्तर प्रदेश के व्यापारी श्री चिम्मनलाल को खुर्जा के मजिस्ट्रेट श्री हेनरी ने फीजी भेजने के लिए चुना। श्री मेकनील से मिलने के लिए श्री चिम्मनलाल लन्डन गए। पहले वे लोग करीबियन सागर के उपनिवेशों - गयाना, ट्रीनीडाड और जमैका देखने गए। इस के बाद फीजी आए। इन्हों ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि भले ही प्रथा में कमजोरियाँ मालूम हो, परन्तु मूल रूप से शर्तबन्धी प्रणाली में कोई खामी नहीं है। और सन् १९१३ में इस कमेटी ने अपनी यात्रायें पूरी की। यही वह वर्ष था जब कि दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गाँधी का आन्दोलन अपनी चारम सीमा पर था। सितम्बर में वे फीजी पहुँचे और वहाँ से रिपोर्ट लिखने के लिए भारत लौट गए।

ओवरसियर गोरों की धमकियों और भार के कारण आगे सही सही गवाही देने में शर्तबन्ध मज़दूर असमर्थ थे। इन लोगों ने श्री चिम्मनलाल जी की सेवा के लिए एक पत्र द्वारा निवेदन किया। इस पत्र में अपने कष्टों का हाल लिखा और सुधार के लिए प्रार्थना की। पत्र का साराँश यह था:

- जितने ओवरसियर होने चाहिये, सब विवाहित होने चाहिये। इन लोगों का भारतीय रीति-रिवाज और हिन्दी भाषा से थोड़ा बहुत परिचय होना आवश्यक है, जिस से कि वो लोगों के दुख सुख को समझ सकें।
- जो आदमी ओवरसियर का काम कर चुका हो, उसे कुली इन्सपेक्टर नियुक्त नहीं करना चाहिए क्यों कि ओवरसियर का काम कर लेने वाले के दिल में दया और शील लेश मात्र नहीं रहता।
- प्रतिमास, उन्हें प्रत्येक कोठी में जाकर रिपोर्ट लिख कर लानी चाहिए।

बार्टन साहब ने अपने 'द फीजी ओफ टुडे' पुस्तक में लिखा है कि जब

ओवरसियर ने एक सरदार से कहा कि तुम जाकर एक रूपवती स्त्री ले आओ, तो वह सरदार पढ़ा लिखा होशियार था और उस ने इन्कार कर दिया। इसी बात पर ओवरसियर ने उसे खूब पीटा और उल्टे छः महीने की जेल करवा दी। पादरियों ने इस पर लार्ड साहेब के पास अर्जी भेजी, तब कहीं वह सरदार जेल से छूटा। वह दुष्ट ओवरसियर कोठी से निकाल दिया गया।

७

ज़मीन की समस्या

गोरे जितनी ज़मीन लेना चाहते हैं, उनको मिल सकती है। दो शिलिंग से तीन शिलिंग प्रति बीघे तक खरीद सकते हैं। कानून बनाने वाले वे ही गोरे हैं जिनके पास हजारों बीघे ज़मीन हैं। हिन्दुस्तानी ऐसा नहीं कर सकते थे। हिन्दुस्तानी लोग जब जंगल काट कर ज़मीन तैयार करते तब उनकी ज़मीन छीन ली जाती है। जिन के पास चार या पाँच वर्ष से सरकारी ज़मीन है तो जब सरकार चाहती थी तो छ: महीने की नोटिस देकर ले लेती थी।

मेकनील और चिम्मनलाल कमीशन सन् १९१३ के अन्त में अपनी रिपोर्ट के अन्तिम अध्याय में लिखा कि 'हम ने अपनी जाँच के दौरान जिन तथ्यों को पाया, उनका ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि इस प्रथा में जो बुराईयाँ है, उनकी अपेक्षा इस से लाभ ज्यादा है।' ऐसा लिखा कर लोर्ड हार्डिंग को हिन्दुस्तान भेजा था।

जिस समय सेंडर्सन कमेटी नियुक्त हुई थी, मोरिशस में अशान्ति थी। जिस समय मेकलीन आयेजना कार्यरत था, उसी समय गयाना और दक्षिण अफ्रीका में आशान्ति फैली और ब्रिटिश गयाना के राज होल बागान में दंगा हुआ और भारतीय मज़दूरों को पुलिस की गोली का शिकार होना पड़ा जिसको लेकर भारतीय व्योस्थापिका परिषद् में श्री सुरेन्द नाथ बनर्जी से सवाल उठाया और भारत सरकार से यह माँग की कि जो लोग मारे गए, उनके रिश्तेदारों को हरजाना दिया जाएं। मोरिशस सरकार ने यह माँग की कि तीन साल की शर्तबन्धी पर जिसके बाद निशुल्क वापसी की व्यवस्था हो, मज़दूर भेजे जाए। परन्तु मोरिशस के भारतीयों ने विरोध किया। उन्होंने अपनी प्रतिवेदन में कहा: 'भारतीय कूलियों को फिर गरीबी, भूखमरी और चोरी की उस पतित सिथित में जाना पड़ेगा, जिन में वे पाँच वर्ष पहले थे।'

आसाम और मलाया में जो ब्रिटिश-भारत के अंग थे, शर्तबन्धी प्रथा पर चाय और रबड़ के बागानों में जो मज़दूर ले जाए जाते थे, उन के लिए शर्तबन्धी समाप्त कर दी गई थी। इस के बाद भी उपनिवेशों के लिए मज़दूर

नहीं मिलते थे।

नवम्बर सन् १९१३ में महात्मा गाँधी ने नैटाल में अपना सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ किया और हजारों मज़दूरों ने महात्माजी के साथ ट्राँसवाल सीमा तक मार्च किया। दो हजार लोगों के साथ गाँधी जी गिरफतार हुए और उन्हें नौ महीनें की सजा दी गई। उन्हें कोयला खादानों में भेज दिया गया, जहाँ के सुपरवाइज़र उनके जेलर हो गए। इस घटना की ब्रिटेन के भारत मंत्री कार्यलय तथा दिल्ली के वायसरोय के कार्यलय पर बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। मैकनील-चिम्मनलाल रिपोर्ट यद्यपि सरकारी अफसरों में प्रचारित कर दी गई थी, उसे प्रकाशित नहीं किया गया क्योंकि देश में दक्षिण अफ्रीका के विरुद्ध बड़ा क्षुब्ध वातावरण था। भारत मंत्री लार्ड कू ने वायसरोय लार्ड हार्डिंग को यह सुझाव दिया कि सब भारतीयों को भारत वापस बुला लिया जाए नहीं तो उन्हें निकाल दिया जाएगा। उनका मत था कि शर्तबन्धी प्रथा समाप्त करने की यह स्वाभाविक प्रतिक्रिया है।

इस बीच दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्राहियों और हड़तालियों को कोड़े मारे गए। इन समाचारों को पढ़ कर लार्ड हार्डिंग का खून उबल पड़ा और मद्रास में उन्हों ने एक भाषण दिया जिस में उन्हों ने कहा कि 'दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों ने जिन कानूनों का भंग किया है, जान बूझ कर भंग किया है कि उन्हें क्या दंड सहने पड़ेंगे। इस सारे कार्य में उनके साथ भारत की गहरी और जीवन सहानु भूति है, केवल भारत मात्र की नहीं, बल्कि मेरे जैसे व्यक्ति की भी जिस में इस देश के प्रति सहानुभूति की भावना है।'

उनके इस भाषण की ब्रिटेन और दक्षिण अफ्रीका में बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। जनरल स्मट्स ने यह माँग की कि लोर्ड हार्डिंग को भारत के वायसराय पद से हटा दिया जाए। लोर्ड हार्डिंग ने यह स्वीकार किया कि 'मैं यह समझता हूँ कि मेरे भाषण के कुछ अंशों की आलोचना हो सकती है, पर वे विचार सीधे मेरे जिगर से निकले हैं।'

इन परिस्थितियों में मेकनील-चिम्मनलाल रिपोर्ट पर विचार हुआ। मध्य प्रदेश के चीफ कमीश्नर सर बेन्जमिन रोबर्टस को कहा गया कि वह दक्षिण अफ्रीका जा कर महात्मा गाँधी और जेनरल सम्ट्स के बीच सत्याविरोध को समाप्त करवायें। इसके उत्तर में उन्हों ने गृह-सचिव सर विलियम क्लार्क को लिखा कि उनकी यह राय है कि शर्तबन्धी मज़दूर प्रथा को अब बिल्कुल समाप्त कर देना चाहिए। मार्च सन् १९१२ में भारतीय व्यवस्थापिका सभा में जो मतदान हुआ, उसे ना भूलना चाहिए। न्याय भारतीय सदस्यों के पक्ष में था।

८

संघ की स्थापना तथा शर्तबन्धी का खात्मा

आरम्भ में भारतीयों ने रेवा और सूवा मे बसे। नौसोरी में चीनी मिल थी, और नावुआ में दूसरी मिल थी। यह वही क्षेत्र था जहाँ हिन्दुस्तानी इकट्ठे रहते थे। उन दिनों यहाँ तूफान बहुत आते थे। एक बार जब तूफान से बहुत कष्ट हुआ, तब भारतीय निवासियों ने सन् १९११ में ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) फीजी में बनाई। इन में श्री जे. पी. महाराज, पं. तोताराम सनाढ्य, बाबू राम सिंह और श्री राम रूप थे। इन्हों ने महात्मा गाँधी को दक्षिण अफ्रीका में एक पत्र लिखा कि फीजी में कोई भारतीय वकील नहीं है। लेकिन उन्हों ने यह पत्र और इसके साथ का एक लेख अपने पत्र 'इन्डियन एसोसिएशन' में छापा।

डाक्टर मनीलाल मोरिशस में

डाक्टर मनीलाल पर मोरिशस में संक्षिप्त जानकारी इस तरह है। 11 अक्तूबर सन् १९०७ (1907) को महात्मा गाँधी ने डा. मनीलाल को मोरिशस भेजा था। वे ११/१०/१९०७ को मोरिशस के राजधानी पोर्ट लुई में लाला हरदयाल, पंडित परमानन्द, वीर सावरकर और श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा जैसे भारतवर्ष की स्वाधीनता के लिये संघर्ष करने वालों के सम्पर्क में आए थे। १६ अक्तूबर सन् १९०७ को मोरिशस के उच्चतम न्यायालय में वकालत करने की शपथ ली तो पगड़ी पहन रखी थी। न्यायाधीश उन से नाराज़ हुए, परन्तु उन्हों ने समझाया कि यदि वह पगड़ी उतार कर अदालत में प्रवेश करते हैं तो भारतीय परम्परा के अनुसार यह न्यायालय का अपमान होगा। उन्हों ने अपना यह दृष्टिकोण पत्रों में भी प्रकट किया था। मोरिशस में डा. मनीलाल ने गिरमिट प्रथा के विरुद्ध कस कर आन्दोलन किया था।

श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने भी सन् १९१२ में केन्द्रीय व्यस्थापिका सभा में शर्तबन्धी मज़दूर प्रथा को समाप्त करने के लिए प्रस्ताव रखा था।

डाक्टर मनीलाल का फीजी आगमन

डा. मगन लाल के पुत्र डाक्टर मनीलाल सन् १९१२ में फीजी आए थे। मई सन् १९११ में पंडित तोताराम सनाढय भारत लौटे जहाँ पर उनकी पूस्तक 'फीजी द्वीप में मेरे एक्कीस वर्ष' में फीजी के भारतीय मज़दूर पर हो रहे अत्याचार के बारे में लिखा था। डा. मनीलाल सूवा, रेवा और नावुआ में सभायें संगठित की और २ जून सन् १९१८ को फीजी की इन्डियन इम्पीरियल एसोसिएशन की स्थापना की। यह सभा सूवा में फल्ग स्टाफ के निकट महन्त सिंगल के मकान पर हुई थी। इस संस्था का उद्देश्य यह रखा गया कि भारतीय समुदाय के हितों की रक्षा करेगी और उनकी स्थिति में सुधार लाने में सहायता करेगी। इस में कोई शखायें नहीं थी। फीजी के सभी लोगों को सदस्य बनने का अधिकार था। इस में सरकारी कर्मचारी भी सम्मिलित थे। यह संस्था श्री सी. एफ. एन्ड्रुज़ से पत्र व्योहार करती थी। इन्होंने सरकार को आवेदन पत्र दिए कि विवाह कानून में सुधार किया जाए। फीजी के विधान परिषद् में भारतीयों की प्रतिनिधित्व किया जाए और मृत्यु दण्ड समाप्त कर दिया जाए। जिस समय भारत में यह निर्णय हो गया की फीजी में शर्तबन्धी प्रथा समाप्त कर दी जाएगी, तो पोलिनेशिया के बिशप तथा एक अन्य सरकारी कर्मचारी भारत में आकर मिले। उन्हों ने प्रमुख भारतीय राजनीतिज्ञों से, जिन में श्री निवासन शास्त्री भी थे, यह अनुरोध किया कि भारतीयों का फीजी में प्रवास जारी रखना चाहिए। जिस समय यह प्रतिनिधि मंडल भारत आने वाला था, डा. मनीलाल ने अपने संगठन की ओर से सी. एफ. एन्ड्रुज़ के पास एक तार भेजा जो असोसिएटडस प्रेस ओफ इन्डिया के द्वारा ७ अक्तूबर सन् १९१९ को सारे देश में प्रसारित हुआ। इस तार का तात्पर्य था:

> फीजी की सरकार एक अधिकारी तथा एक पादरी को इस लिए भारत भेज रही है कि श्री एन्ड्रुज़ ने फीजी के बारे में जो कहा, उसकी खंडन हो और फीजी में श्रमिकों का प्रवास फिर जारी हो। इनफ्लुएनज़ा की महामारी से हालत अत्यंत दुर्दशाजनक थी। बहुत से लोग निराश्रित हो गए थे और जब उन्हों ने स्थानीय फीजीयन भुमि पर बसा तो उन पर मुकदमा चलाया गया। बेरिस्टर मनीलाल को खास तौर पर चुना गया और उन्हें एक महीने की सजा सुनाई गई जब कि जाब्ते और गवाही में खामियाँ थी। उन पर आरोप यह

> था कि उन्हों ने एक स्थानीय सरदार की भुमि पर उन की मर्जी से कार्यालय बनाना चाहा और यह सब कानून के अन्तर्गत किया गया जिसका कथित उदेश्य भारतीयों को रक्षा करना था।
>
> सिडनी की हड़ताल ने केला उदूपादकों को बर्बाद कर दिया। आँटा मिल नहीं चल रहा था। स्थानीय चावल का मुल्य तिगुना हो गया। लोग झोपड़ी कर तथा किराया देने में अस्मर्थ थे। भविष्य गम्भीर था। कृपया इस मामले को भारतीय सरकार तक पहूँचाये।[1]

फीजी की सरकार इस तार से और भी नारज़ हुई क्योंकि वह भारत से मज़दूर लाने में बाधक सिद्ध हुई।

जब भारत ने फीजी को सूचना दी कि पहली जनवरी सन् १९२० से फीजी में कोई व्यक्ति शर्तबन्धी प्रथा के अंतर्गत काम नहीं करेगा, तो भारतीयों में बहुत उत्साह हुआ। २५ दिसम्बर सन् १९१९ को सूवा टाउन होल में दो हजार आदमियों ने उत्साह मनाया। सभा की अध्यक्षता डा. मनीलाल ने की। सब से पहले श्री हरपाल ने राष्ट्रीय गीत गाया। इन प्रमुख्य भारतीय जैसे श्री फज़ल अहमद खाँ, श्री भगवती प्रसाद, श्री राम सिह, श्री दूली चंद, श्री नूर मुहम्बद, श्री नासिर अली और टीकाराम शामिल थे। महात्मा गाँधी और महात्मा तिलक की जय जय के नारे लगाए गए।

डा. मनीलाल का भाषण

इस सभा में डा. मनीलाल ने जो भाषण दिया था, वह इस प्रकार था:

> फीजी सरकार ने हमारे हिन्दुस्तानी भाइयों की शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया है और ना किसी लड़के-लड़की को डाक्टरी का काम सिखाया है। फीजी में ३,००० गोरे हैं। उनके वास्ते एक स्कूल

---

[1] The Government of Fiji is sending an official and the bishop to contradict Mr. Andrews in India and to induce the renewal of labour emigration to Fiji. In influenza epidemic, Indian mortality was highest owing to lack of medical care. Indians were miserable. Many who were left destitute occupied native Fijian land and were prosecuted. Mr Manilal, barrister, was singled out and sentenced to one month imprisonment inspite of flaws in the procedure and evidence for building office on a native chief's land with the consent under the professedly passed (law) to protect Indians, no suitable land is available.

Sydney strike has nine banana growers. Flour (is) not to be had. Local rice is treble in price. People are unable to pay hut taxes and rent, Outlook (is) serious. Please represent the matter to the Indian Government.

समुद्र के किनारे है। लेकिन ६१,००० हिन्दुस्तानियों के लिए एक भी मदरसा सरकार ने नहीं बनाया। फीजीयन लोगों को तालीम देने के लिए हर गाँव में स्कूल है। लेकिन हिन्दुस्तानी बच्चों के लिए कुछ प्रबन्ध नहीं किया गया। उनके लिए अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध किया जाए। अभी तक सरकार कहती आई है कि उन के लिए इंगलेन्ड में स्कूल है।

फीजी गर्वमेन्ट हमें नीची निगाह से देखती है। हमें गुलामी के दर्जे में रखना चाहती है। ९,००० (9,000) हिन्दुस्तानी इन्फ्लुएन्ज़ा के बिमारी में मर गए, लेकिन ८४ (84) फीजीयन ही मरे क्योंकि उनके लिए बहुत इंतजाम किया गया है। मज़दूरी कम है। पाँच शिलिंग रहे तो ठीक है। इसी कारण से मनीलाल और उनके कट्टर समर्थ को देश से निकालने की बहाना ढूँढ़े जा रहे है।'

सरकार ने इसे राजनैतिक उल्झाव बतलाया; यह कहा कि महात्मा गाँधी आश्रम में रंगून के प्रसिद्ध व्यापारी डा. प्राणजीवन मेहता की पुत्री जय कुमारी रह रही थी। उनकी शादी डा. मनीलाल से हो गई थी और विवाह के बाद फीजी आई थी। एसी बातों को लेकर फीजी सरकार राजनैतिक उल्झाव बतलाती थी। बराबर यह प्रचार किया कि फीजी के आन्दोलन के पीछे भारतीय राजनितिज्ञों के हाथ हैं। इस आन्दोलन का आधार स्थानीय न हो कर, ब्रिटिश शासन के प्रति विद्रोह है।

इसी लिए जब २९ दिसम्बर सन् १९१९ को फीजी इन्डियन इम्पीरियल एसोसिएशन ने अपनी माँगे भेजी तो गर्वनर मि. रोडवेल ने यह आदेश दिया कि फिलहाल इन माँगों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाए।

ये माँगे थीं, शर्तबन्धी कुली प्रथा के इकरार नामों को तत्काल समाप्त किया जाए, मालिक और सेवक अध्याय देश को निरस्त किया जाए, भारतीयों की शिक्षा की सुविधाओं में सुधार हो, जिस प्रकार फीजीयन लोगों को डाक्टरी शिक्षा दी जा रही है, भारतीयों को भी दी जाए, भारत लौटने वाले मज़दूरों को अपने साथ बचे बचाये पौंड या गिन्नियाँ ले जाने की अनुमति दी जाए, एक गन्ना मंडल की स्थापना की जाए, झोपड़ी घर तथा फेरी लगाने वालों के लिए लाइसेन्स प्रथा समाप्त की जाए।

सरकारी ऋण समितियों या कृषि का प्रशिक्षण हो, कुशल भारती कारीगरों को जैसे एन्जिन ड्राइवरों तथा अन्य लोगों को जो खतरनाक मशीने

चलाते हैं, उच्छी तनखाह दी जाए, काम करते हुए क्षतिग्रस्त होने पर मज़दूरों को हरजाना दिया जाए, भारती बस्तियों से मिलने वाली सड़क अच्छी हो, भुमि प्राप्त करने में बिना जातिय भेद भाव के अधिक सुविधायें हों। जहाँ अभी तक भारतीय जहाजों में केवल डेक पर मुसाफिर के रूप में जा सकते हैं, उसके स्थान पर सुविधा जनक स्थिति हो और अच्छी रेलवय सुविधायें भी हो।

म्युनिसिपल अध्यादेश में संशोधन कर के यह संभव किया जाए कि अधिकाँश भारतीय कर दाता म्युनिसिपल चुनाव में बोट दे सकें, भारतीयों को भी राजनैतिक मतदान का अधिकार हो और समस्त फीजी अध्यादेशों को इस प्रकार बदला जाए कि भारतीय वो अधिकाँश काम कर सकें जो अभी तक यूरोपियन ही कर सकते हैं।

२५ दिसम्बर सन् १९१९ को सूवा सम्मेलन में यही बातें हुई।

शर्तबन्धी के खात्मा पर जलसा

जब भारतीयों को मालूम हुआ कि ३१/१२/१९१९ के बाद शर्तबन्धी मज़दूरी नहीं रहेगी, क्योंकि हिन्दुस्तान में पं. मदन मोहन मालवीय का प्रस्ताव पास हो गया कि २ जनवरी १९२० को फीजी के सभी मज़दूर मुक्त हो जाएगें, तो खुशियाली छा गई।

श्री बी. डी. लक्षमन के अनुसार जगह जगह पर सभायें हुई जिनमें बधाई और धन्यवाद के प्रस्ताव पास हुए। इन प्रस्तावों के द्वारा महात्मा गाँधी, पं. मालवीय, श्री सी. एफ. एन्ड्रुज़, पं. तोताराम सनाढय, पं. बनारसी दास चतुरवेदी, डा. मनीलाल, रेवरन्ड बार्टन और मिस डडली को बधाइयाँ भेजी गई। एसी खुशियाँ फीजी में पहले कभी नहीं देखी गई। नौसोरी, बूदी रोड पर एक जलसा मनाया गया जिसमें दूर दूर से लोग आए और बाँस, काले कागज़ और पटाके से २५ फुट ऊँचा और १० फुट मोटा गिरमिटिया मज़दूर का पुतला बना कर जलाया गया।

सन् १९२० से लोगो ने ज़मीन खरीदना और पट्टे यानि लीस पर ज़मीन ले कर खेती करना शुरू किए। जो लोग शर्तबन्ध मज़दूर थे, उन्हें गोरे मालिक मार्च तक काम कराने की प्रयास करते थे। उन्ही दिनों गोरे और हिन्दुस्तानियों में ज्यादा बिमनस बढ़ा।

सन् १९१४ के युद्ध के कारण चीज़ो के मूल्य बढ़ गए थे, लेकिन मज़दूरी नहीं बढ़ा। सन् १९१६ में ब्रिटिश गिन्नी पैसे का निर्यात रोक दिया था जिसके

कारण जो भारतीय बाहर जाते थे, उन्हें हानि होती थी। पौंड का मूल्य सपक्ष दृष्टि से कम था। लेकिन फीजी टाइम्स और हेरल्ड पत्रिकाओं ने इन भाषणों को तोड़ मरोड़ कर अंग्रेज-विरोधी रूप में प्रकट किया जिससे गोरे निवासी और भी भड़क उठे। एसोसिएशन के मंत्री बाबू रूप सिंह से पूछा गया कि वह संस्था के बारे में सूचना दें और सभा की कार्यवाई का अधिकृत विवरण दें। जब उत्तर प्राप्त हुआ तो कोलोनियल सेक्रेटरी ने आदेश दिया कि हम इन कार्यवाईयों की अपेक्षा कर सकते हैं।

६

हड़ताल और गोलाबारी

सूवा की घटना

दोनो पक्षों में एक दूसरे के प्रति शंका और संशय का वातावरण था। इसी बीच सूवा की घटना ने चिनगारी का काम किया। नावुआ में रोड बोर्ड का काम ८ घंटे रोज़ से बढ़ा कर ९ घंटे कर दिया गया। श्री गिलियन के अनूसार ४५ (45) घंटे सप्ताह से बढ़ा कर ४८ (48) घंटे कर दिया गया। शाँतिदूत के भूतपूर्व सम्पादक पं. गुरुदयाल शर्मा द्वारा लिखित 'फीजी में गोली काण्ड' (अप्रकाशित) पुस्तक के अनुसार ओवरसियर ने तलब थोड़ी सी बढ़ा दी थी लेकिन काम का समय ८ से ९ घंटे का कर दिया था। मज़दूर इस बात को सहन न कर सके। गोरों ने उन से बात करना बन्द कर दिया। इस लिए मज़दूर लोग काम पर नहीं आए। जब यह खबर सूवा पहूँची तो सूवा के पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेन्ट और म्युनिसिपेल्टी ने समझा कि काम करने वाले भारतीयों ने हड़ताल कर दी। १५ जनवरी सन् १९२० को नावुआ में हड़ताल कर दी, १९ को सूवा में और २१ को रेवा में जो बाद में नौसोरी तथा लेबूका में भी हुई।

२३ जनवरी सन् १९२० को मुआनिवातू में स्त्रियों की एक सभा हुई जिस में यह फैसला किया गया कि वे अपने पतियों से कहेंगी कि जब तक मज़दूरी ५ शिलिंग प्रतिदिन के नहीं होते तब तक वे काम पर नहीं लौटेंगें।

२५ जनवरी को नौसोरी के एक स्थान पर बुद्धिमान भारतीयों की सभा हुई जिस में यह प्रस्ताव पास हुई कि सब भारतीय मज़दूर काम छोड़ दें।

दूसरे दिन बहुत कम लोग काम पर गए और जो गए भी उन को रोकने के लिए धरना दिया गया। इस पर सी. एस. आर. कम्पनी के मैनेजर मि. लार्ड ने पुलिस से शिकायत की कि वफादार मज़दूरों को जबरदस्ती आने से रोका जा रहा है।

पुलिस ने धरना देने वाले चार व्यक्तियों को पकड़ लिया। १,००० भारतीय नौसोरी में इकट्ठे हो गए और उन्हों ने दुल दुल के थाने पर धावा बोल दिया।

इन में आगे आगे भारतीय स्त्रियाँ थी। जब कोट के दरवाजे और खिड़कियों के शीशे टूटने लगे, तब मजिस्ट्रेट ने बाहर आ कर कहा कि हम कागज़ पर दस्तखत करा के उन आदमियों को अभी छोड़ देंगे। सेवक महाराज ने जमानत के बोंड पर दस्तखत कर दिए और उन को छोड़ दिया गया। इसी दिन नावुआ में कई आदमियों पर मुकदमा चलाया गया, कि वे लोग काम पर जाने वालों को रोकते थे। इन सब कारणों ने वातावरण में बड़ी उत्तेजना पैदा कर दी। लेकिन मेजिस्ट्रेट ने मुकदमा खारिज कर दी और गिरफ्तार लोगों को छोड़ दिया।

उधर जब सूवा में यह खबर मिली कि एक हजार से ज्यादा भारतीय नौसोरी के थाने पर धावा बोलने वाले है तो यहाँ से एक सेना मशीनगनें लेकर नौसोरी के लिए चल पड़ी।

फीजी में भारतीयों का अपना समाचार पत्र न होने के कारण तरह तरह के अफवाहें फैल जाती थी। उसी दिन नौसोरी में किसी ने कल्लन सरदार को पीटा और तुराकी के एक दक्षिण भारतीय मज़दूर को इसीलिए एक होटेल अंग्रेज मालिक पेटसन ने पीटा क्योंकि वह नोटिस दे कर काम छोड़ना चाहता था। भारतीयों ने उस होटेल पर भी धावा बोल दिया। पेटसन भाग निकला। फीजीयन पुलिस और होटेल पर धावा बोलने वालों में झड़पें हुई। बाद में पुलिस चली गई।

सूवा के पड़ोस एक गाँव तामाबुआ में भी भीड़ इकट्ठी हो गई थी लेकिन फिर वह तितिर-बितिर हो गई।

३० जनवरी सन् १६२० को १५ पुरूष और १० स्त्रियों का एक प्रतिनिधि मंडल गवर्नर से मिला। इस स्मरण पत्र में महंगाई के बारे में विस्तृन विवरण दिया हुआ था और जिन जिन वस्तुओं के दाम बढ़ गए थे, बतलाया गया। कहा गया कि जो चीजें चार पेन्स में मिलती थी अब एक शिलिंग हो गई थी। मज़दूरी उतनी की उतनी ही थी। शिष्ट मंडल का कहना था कि आज की हड़ताल का एक कारण महंगाई है। सरकार इस हड़ताल में हस्ताक्षेप करे और मज़दूरी ५ शिलिंग प्रतिदिन का कर दे। उन्होंने यह भी कहा कि हमने मज़दूरों के एजेन्ट से भी कुछ दिन पहले यह अनुरोध किया था कि या तो हमारी वेतन बढ़ा दी जाए या हमें जहाज दिए जाए जिन पर हम भारत लौट सकें।

युद्ध के कारण जहाज उपलब्ध नहीं थे। जो मज़दूर भारत जाने के हकदार थे, वे भी नहीं जा पाते थे। शिष्ट मंडल ने कहा कि जब तक मज़दूरी पाँच शिलिंग नहीं होगी, हड़ताल जारी रहेगी। परन्तु सरकारी राजपाल ने यह कहा

कि वे तब तक कोई बृद्धि नहीं देंगे जब तक मज़दूर काम पर नहीं लौटते। सरकार मज़दूरी और जीवन-यापन के खर्च का जाँच के लिए एक अयोग की नियुक्ति कर देगी। दूसरे ही दिन आयोग की नियुक्ति कर दी गई। इस शिष्ट मंडल की अगुआई श्रीमती जय कुवारी मनीलाल ने की थी।

भारत सरकार और भारतीय नेताओं के दबाव के कारण, शर्तबन्धी मज़दूर प्रथा समाप्त कर दी गई थी, परन्तु युरोपियन व्यापारियों, सी, एस. आर. कम्पनी तथा गोरों का इस निश्चय में फीजी का विनाश दिखाई दे रहा था। २८ जनवरी १९२० को फीजी विधान परिषद् के युरोपियन सदस्य गर्वनर से मिले। उन्हों ने उस से कहा था कि जनता में आतंक है और भारतीयों का दृष्टिकोण मुख्यता जातीय हो गया है। उन्होंने गर्वनर को यह सूचना दी कि २ फरवरी को भारतीयों की ओर से सरकार-विरोधी बड़ा व्यापक प्रदर्शन होगा। पहली फरवरी को रविवार के दिन गर्वनर ने सूवा के प्रमुख्य नागरिकों की एक बैठक प्रतिरक्षा क्लब में बुलाई और यह कहा कि यदि शाँतिर्पूण प्रदर्शन हो तो संयम बरता जाए और उस में कोई हस्ताक्षेप ना किया जाए। सम्भवत गर्वनर को यह आशंका रही होगी कि गोरे लोग हस्ताक्षेप करेंगे। इस से स्थिति बिगड़ेगी। दूसरे दिन सभी मौके स्थानों पर सेना तैनात कर दी गई लेकिन प्रदर्शन नहीं हुआ। इस के बाद गर्वनर के पास यह सामाचार आया कि रेवा में भारतीय इकट्ठे हो रहें हैं। वे सूवा के बड़ी बड़ी दुकानें लुटेंगे और टेलीफोन लाइनें काट देंगे। गर्वनर ने यह अनुभव किया कि गम्भीर उपद्रव होने की सम्भावना है और उसके लिए सरकार ने कार्यवाई की। १२ फरवरी १९२० को सरकार ने एक आदेश निकाला कि सब लोग काम पर वापस आ जाए और अगर २० आदमियों से ज्यादा की सभा करनी हो तो तीन घंटे पहले पुलिस से इजाजत लेनी पड़ेगी। १७ फरवरी को पुलिस से इजाजत लेकर भारतीयों ने सूवा के क्रिक्ट ग्राउन्ड में एक बड़ी सभा की। उस में एक याचिका पढ़ी गई, जिस में फीजी स्थित भारतीयों के दुखों का वर्णन था। यह निश्चय हुआ कि यह याचिका गर्वनर साहब को नौसोरी में दी जाए। गर्वनर साबह ने नौसोरी में याचिका ग्रहण करने से इन्कार कर दिया। सभा में कहा गया था कि गर्वनर साहब के आव्रजन के एजेन्ट जेनेरल और पुलिस के इन्सपेक्टर के अलावा और कोई दूसरा गोरा ना हो। गर्वनर ने यह समझा कि उन से यह प्रार्थना हड़ताली नेताओं के दम्भपूर्ण व्यवहार का प्रतीक है। यह प्रस्ताव कि 'मैं चौदह मील की यात्रा कर चुपके-चुपके हड़ताली नेताओं से बाते करूँ। यह ऐसा था जिस के बारे में यह कहने की जरूरन नहीं कि मैं उसे एक क्षण के लिए भी स्वीकार

नहीं कर सकता।'

परन्तु गर्वनर महोदय गोरे नागरिकों को व्यापारियों और समाचार पत्रों की विचारधारा से इतने प्रभावित हो चुके थे कि उन्हों ने भारतीयों के प्रति उनकी कठिनाइयाँ समझने के लिए कोई सहानुभूति नहीं दिखाई। परिणाम स्वरूप एक बड़ी घटना हो गई। सन् १९२२ में भारत सरकार ने राजू आयोग को फीजी भेजा। राजू आयोग में श्री वेंकटपति राजू के अलावा श्री हेनरी कोर्बट और श्री गोविंद सहाय शर्मा आदि भी थे इस लिये आयोग की राय को एक सम्मिलित मत समझना चाहिए। आयोग का विचार था:

> हम यह अनुभव किये बिना नहीं रह सके कि इस निमंत्रण को बहुत गलत तरीके से समझा गया, जिस का परिणाम दुखांत हुआ। भारत के सभी सरकारों का कानून यह रहा है कि छोटी सी छोटी प्रजा को अपने हाकिम तक पहुँचने का अधिकार रहा है। हम यह नहीं समझते कि आदेश देने का कोई इरादा था। रेवा जिले के लोगों से इस बात की सम्भावना नहीं थी कि वे सूवा जा सकें। उन्हें जाने की इजाजत नहीं दी जाती। और ना इस में कोई आश्चर्य हैं कि वे गर्वनर से अलग से मिलना चाहते थे।
>
> उन्हें भय था कि बड़े शक्तिपूर्ण प्रभाव उनके विरुद्ध हैं। परन्तू उन्हें आशा थी कि अगर वे गर्वनर से आमने सामने मिल लिए तो उनकी शिकायत दूर हो जाएगी। हमारी समझ में उनकी यह चिन्ता कि वे अपनी शिकायतों को व्यक्तिगत रूप से गर्वनर के समक्ष रखें, गर्वनर के प्रति विश्वास मानी जानी चाहिए, ना कि निरादर।[2]

फीजी में प्रतिदिन कुछ-न-कुछ एसी घटनायें होती रहीं। १७ फरवरी को भारतीयों की सूवा में फिर बैठक हुई और माँग की गई कि मज़दूरी ५ शिलिंग

---

[2] 'We cannot feel that this invitation was grievously misunderstood. The right of the humblest subject to approach Hakim (ruler) has from time immemorial been the foundation of all governments in India. We do not think there was any intention to be dictatorial. It was scarcely possible for the people of the Rewa district to go to Suva; they would not have been permitted to go. Nor is it surprising that they wished to see the Governor alone.'

'They feared that powerful influences were working against them but if only they could meet the Governor face to face, they still hoped for redress of their anxiety to place their grievance personally before the Governor. This should in our opinion be regarded as a mark of confidence, not of disrespect.'

कर दी जाए और मालिक की और सेवक का करारनामा काट दिया जाए। बीस वर्ष तक दक्षिण अफ्रीका में सेवा कर चुके वाले गोरे गर्वनर रोडवेल ने इसे ठुकरा दिया। भारतीयों की माँग को शान्त करने के बजाये फरवरी तक सभी युरोपियन को हथियारबन्द कर दिया गया। रेवा, नावुआ और अन्य स्थानों पर फीजीयन लोगों को कोन्सटबल के रूप में भरती किया गया। लाउ द्वीप से जी. एम. हेनिंग्स ने २०० कोन्सटबल भरती किए और उन्हें सड़को और पुलों की रक्षा के लिए तैनात कर दिया। यही नहीं, रोडवेल महोदय इतने घबरा गए कि उन्हों ने अस्ट्रेलिया और न्युज़ीलेन्ड से सेना भी बुला ली। १२ फरवरी को न्युज़ीलेन्ड से ६० सैनिक और लिविस तोपों का तोपखाना भी आ गया। यह सारी तैयारियाँ कहने को तो गर्वनर रोडवेल ने इस लिए की थी कि यदि स्थानीय तौर पर पर्याप्त सेना भरती की जाती तो भी भारतीय उन की आत्म निर्भयता में विश्वास नहीं करते। इसका परिणाम यह होता कि हजारों भारतीय और एक सेना के बीच टकराव होती। भारतीय संख्या में अधिक होने के कारण टकराव कर सकती थी। परन्तु अन्त में सशस्त्र सेना की ही चलती। लेकिन इस प्रक्रिया में बन्दूकें और मशीनगनें चलानी पड़ती जिस में खून खराबा होता। ब्रिटिश सेना से एक जहाज माँगा गया परन्तु उस ने इन्कार कर दिया। लेकिन अस्ट्रेलिया की सरकार बड़ी आसानी से स्लूप मार्गरेट नामक सैनिक जहाज भेज दिया जो १४ फरवरी को आ गया। यह उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र के लिए मंगाया गया था क्योंकि राकी राकी, बा और लौतोका में भारी संख्या में भारतीय रहते थे।

न्युज़ीलेन्ड को भी एक पत्र लिखा गया था कि फीजी में मज़दूरों का हड़ताल होने वाला है और मदद की ज़रूरत है। वहाँ के जहाजी मज़दूरों ने उस जहाज में कोयला भरने से इन्कार कर दिया जब उन्हें यह पता चला कि जहाज एक हड़ताल को तोड़ने जा रहा है। परन्तु जब उन्हें कहा गया कि जहाज का उपयोग केवल यूरोपियों को, जिस में स्त्रियाँ और बच्चे भी शामिल है, उपद्रवी भारतीय के अत्याचारों से बचने के लिए काम में लाया जाएगा, तब जहाज में कोयला भरा गया। इस कारण न्युज़ीलेन्ड से सेना आने में देर हो गई और वह १२ फरवरी को पहूँची। इन सैनिकों को सूवा और नौसोरी में पुलिस के मदद के लिए लगा दिया गया। फीजी की सरकार आकारण भयभीत हो गई।

इस गलतफहमी का मूल्य कारण था २५ दिसम्बर १९२० की सभा और डा. मनीलाल के ऊपर ब्रिटिश सरकार का अविश्वास। २५ दिसम्बर वाले सभा में मुख्य माँग ५ शिलिंग रोज की मज़दूरी थी। डा. मनीलाल ने इसका समर्थन

किया और उनका अनुमोदन श्री हरपाल और दूलीचंद्र ने किया था। एक माँग यह भी की गई थी कि हर घर पर जो १० शिलिंग का झोपड़ी टेक्स लगाया जाता था, वह हटा दिया जाए। श्री जोन ग्रान्ट ने सभा भंग करने की कोशिश की और डा. मनीलाल पर आरोप लगाया कि वह झुठ बोल रहे हैं। तब कुछ लोगों ने जोन ग्रान्ट को डाँटा और वे कुछ लोगों के साथ चले गए। उन्हों ने जो समाचार बताये, उसी के आधार पर अंग्रेजी पत्र और युरोपियन लोगो में आतंक फैल गया।

गर्वनर रोडवेल की यह गलतफहमी कितनी भयंकर थी, इसका इस बात से पता चलता है जब डा. मनीलाल बा में इम्पीरियल सिटिज़नशिप एसोसिएशन की शाखा स्थापित करने गए थे; कोई हड़ताल नहीं हुई थी। जिस समय सूवा में हड़ताल हुई, उस समय डा. मनीलाल बा में थे। यहाँ की कारवाई समाप्त होने के बाद वे दो घोड़े वाली विक्टोरिया नामक गाड़ी से वापस आए। उन दिनों समाचार भी जल्दी नहीं पहुँचते थे। सूवा के हड़ताल के खबर जनवरी के अन्त तक बा पहुँची। उनके नेता बी. एन. मित्र ने मज़दूरों को सल्लाह दी कि अभी हड़ताल ना करें, जब दूसरी सभा होगी तब निश्चय किया जाएगा।

सूवा में जिस समय हड़ताल हो रही थी, भारतीयों और गोरो में काफी अन बन हो गया था। उसी समय राकी राकी में एक घटना घटी।

तुराकी में घटना

तुराकी में मारिष्ट ब्रदस स्कूल के पास एक स्थान पर भारतीय स्त्रियाँ बैठ कर आपस में बातचीत कर रही थी। उस समय एक गोरे कोन्सटेबल स्टूवट रय ने उन स्त्रियों में से रहीमन नाम की स्त्री को बुला कर कुछ सवाल पूछे। जो जवाब उसने दी, रय ने ठीक नहीं माना आरै आपस में बाद विवाद होने लगा। रय नाराज़ हो कर उसका हाथ मरोड़ना शुरू किया और उसके सर पर डंडा मारा। इस पर वहाँ जो स्त्री-पुरूष थे, रय पर आक्रमण कर दिये। वहाँ जो पुलिस उपस्थित थी उस से उनकी भिड़ंत हुई और बीस मिनट तक मारपीट चलती रही। दोनों ओर के लोगो को चोटें लगी। इस बीच इंस्पेक्टर जेनरल, डिफेंस फोर्स अपनी सैनिक टुकड़ी लेकर आ गई। उनके पास बन्दूकें और मशीनगनें थीं। उन्हें देख कर भारतीय लोगों ने भाग कर अपने अपने घरों में जा कर दरवाज़ा बन्द कर लिए। पुलिस ने जबरदस्ती दरवाज़ा खुलवा कर मर्दो

और स्त्रियों को पीटा और १६५ व्यक्तियों को पैदल चला कर सूवा पुलिस थाने ले गए और बाद में इन्हें कड़ी सजायें दी गई। १०८ व्यक्तियों को एक एक महीने की, १६ को तीन तीन सप्ताह की, ४ पुरूषों और दो स्त्रियों को एक एक साल की, एक पूरूष और एक स्त्री को सात सात महीने की, तीन आदमियों को छ: छ: महीनें की सजायें फौजदारी करने के अपराध में दी गई। यूरोपियनो को पीटने के अपराध पर दो आदमियों को पाँच पाँच वर्ष, एक को दो वर्ष, एक आदमी को तीन वर्ष, एक आदमी को अट्ठारह महीने, एक आदमी को दस महीने की सजा दी गई। जिन दो स्त्रियों को अट्ठारह महीने की सजा दी गई थी, वे फूल कुँवर और रहीमन थीं। तुराकी की घटना में धनपतिया को १२ महीने की सजा मिली, मंगरी, रायल, छुटकी, मान कुमारी, जमनी, जानकी, करीमन, सोनिया, और अनन्ती को एक एक महीने, हंसराजी और हरदेई को ढाई ढाई सप्ताह की सजा मिली।

उसी दिन पहले खबर मिली कि श्रीमती मनीलाल को गिरफ्तार कर लिया गया। उनको छुड़ाने के लिए कुछ भारती लाठियाँ लेकर सूवा आए। उनको कह दिया कि यह झूठ है। इस पर वे लौट गए। इसी प्रकार दो दल और आए और उनको भी झूठ बतला कर लौटा दिया गया।

दूसरे दिन न्युज़ीलेन्ड से सेना आ चुकी थी। गर्वनर रोडवेल ने लन्डन को तार भेज दिया कि भारतीय उपद्रव अब हड़ताल के स्थान पर एक जातीय उपद्रव का रूप धारण कर रहा है। खून खराबा होने की सम्भावना है और भारतीय आन्दोलनकारी फीजीयन लोगों में राजद्रोह की भावना फैला रहें हैं।

तुराकी मारपीट और गिरफ्तारी की सूचना नौसोरी पहूँच चुकी थी। पुलिस भारतीयों को पकड़ पकड़ और पीट पीट कर सूवा थाने ले जा रही थी। इस समाचार को सुन कर भारतीयों को यह भय हुआ अब जो सेना आई है, वह नौसोरी और रेवा के भारतीयों को भी आतंकित करेगी। इसी लिए कुछ लोगों ने नसीनू का पुल उखाड़ दिया, टेलीफोन के तार भी काट दिए जिस से नौसोरी और सूवा के बीच कोई बात ना हो सके। इसके बाद वइला, दाबुइलेबू, नौसोरी, रारालेबू, वाइनीबोकासी, बूदी, बिरिया और नन्दावा समाचार पहुँची तो वहाँ से लोग इकट्ठे हो कर सूवा की ओर चले। जब उन्हें मालूम हुआ कि पुल उखाड़ दिया गया है, तो वे वुनिमोनो में इकट्ठे हुए और यहाँ एक बृहद सभा हुई। इस सभा में पं. भगवती प्रसाद और पं. राम सेवक ने भाषण दिए। उपस्थित लोगो से शान्ति रखने की अपील की। इस सभा में इन्स्पेक्टर और पुलिसमेन भी थे। उन्होंने कहा कि डंडे फेंक दो। अधिकाँश लोगो ने डंडे फेंक

दिए। फिर सभा विसरजित हो गई।

श्री गुरुदयाल शर्मा के अनुसार उसी दिन लगभग बारह बजे दाबुइलेबु में एक भारी भीड़ इकट्ठी हो गई और ये लोग सूवा जा कर नौसोरी के तरफ चल पड़े। नौसोरी के घाट पर पुलिस ने इन्हें रोक दिया। वहाँ जो पोंटून पुल बना था उसे पुलिस ने घाट से हटा दिया और नाव वालों को आदेश दिया कि किसी को नौसोरी ना ले जाए। पुलिस ने एक लोंच द्वारा, भरी हुई नावों को पकड़ पकड़ कर नौसोरी के घाट के किनारे लगा दिया।

सामाबूला पुल की लड़ाई

इसके बाद सामाबूला के पुल के पास पुलिस, फौज और भारतीयों के बीच में जो भिड़न्त हुई, उसके दो विवरण दिए गए हैं। एक विवरण पुलिस इन्सपेक्टर कर्नल गोलडिंग का जिसको फीजी के गर्वनर राडवेल ने उपनिवेश मंत्री को भेजे गए अपनी खरीते में लिखा है।

गर्वनर रोडवेल के खत सामाबूला पुल की घटना पर

'१३ फरवरी सन् १९२० को तीन बजे लगभग मुझे सूचना मिली कि मैजर नोक्स कुछ घुड़सवारों के संग सामाबूला पर एक भीड़ को रोके हुए थे। इन हिन्दुस्तानियों से कहा गया था कि वे लोग हट जाए। इनकी संख्या दो या तीन सौ की थी। ये सूवा जाने की माँग कर रहे थे। इनकी माँगे नहीं सुनी गई। वे पुल के नज़दीक ही खड़े रहे।

इन्सपेक्टर स्वीनबोर्न, सब-इन्सपेक्टर ल्यूक चितैली, २५ युरोपियन कोन्सटबल तथा फीजीयन कोन्सटबुलरी को लेकर घटना स्थल पर पहूँचे। मि. पैन फादर से मैंने बातचीत की। उन्हों ने मुझे सारी स्थिति समझाई। इसके बाद मैजर नोक्स से जो डिफेन्स फोर्स के अफसर थे, मैं ने कहा कि मैं भीड़ पर आक्रमण करता हूँ। यदि मुझे आप की सहायता की आवश्यक्ता हो तो अपने घुड़सवारों के साथ मेरी मदद के लिए आ जाना। इसके बाद मैं ने कोन्सटबलों के साथ पुल पार कर भीड़ को तितर-बितर करना शुरू किया। साथ ही

मैं ने इस बात का ध्यान रक्खा कि जो आदमी विरोध नहीं करते, उनको चोट नहीं पहुँचाई जाए। हिन्दुस्तानियों का मुख्य भाग ४००-५०० गज दूर पीछे सड़क की तरफ दौड़ा। एक हिन्दुस्तानी के घर के नज़दीक कुछ आदमियों ने बाँस और लाठियाँ ले लीं और हमारे ऊपर कंकड़-पत्थर और लाठियों से वार करने लगे। मैने ध्यान से देखा एक लम्बा आदमी बाँस लेकर मेरे ऊपर झपटा, लेकिन एक कोन्सटबल ने उसे रोक दिया। वह लकड़ी के चोट से बेहोश हो गया। इसी अवसर पीछे से चलने वाले रिवोलवर यानि पिस्तौल की आवाज़ मुझे सुनाई दी। मैं यह कहने में अस्मर्थ हूँ कि पिस्तौल किसने चलाई। मैने सब-इन्सपेक्टर चितैली को उस हिन्दुस्तानियों पर, जिसने मेरे ऊपर आक्रमण किया था, दो बार अपना रिवोलवर चलाते हुए देखा। पर यह निशाने ठीक नहीं बैठे। जब मैंने उस आदमी को घेर लेने के लिए अपने कोन्सटबलों को हुक्म दिया, तब वह हिन्दुस्तानी दूर भागता दीख पड़ा। अगर उस भीड़ पर गोली ना चलाई गई होती तो निःसन्देह हमारी ओर से कितने आदमियों की जानें जाती क्योंकि हिन्दुस्तानी लोग संख्या में हम से बहुत ज्यादा थे। इस घटना के बाद लगभग आधे घंटे तक मैं वहाँ रहा। घायल लोगों और कोन्सटबलों को पुलिस के गाड़ियों में अस्पताल पहूँचाया गया। तीन हिन्दुस्तानियों पर बन्दूक के गोलियाँ के घाव थे। इन में से एक मर गया था। और दूसरे कितनों के सिर और शरीर पर चोटें थी।'

इस विवरण से स्पष्ट है कि भारतीय सामाबूला नदी के दूसरी तरफ इकत्रित थे। यह केवल इस भय से कि कहीं इस पार आने से पुलिस उन पर आक्रमण ना कर दे। इसके बावजूद भी पुलिस ने उन पर आक्रमण किया और तब तक पीछा किया जब तक वे चार पाँच सौ गज दूर सड़क की ओर भाग रहे थे। जब उन्हों ने देखा कि भागने पर भी पुलिस उन्हें नहीं छोड़ रही तब उन्हों ने अपने बचाव में बाँस की लाठी, पत्थर और जो कुछ मिला ले लिया जिनके जवाब में उन पर गोलियाँ चलाई गई।

श्री गोलडिंग का यह बयान कि पुलिस तथा रक्षा सेना को खतरा था, विश्वास नहीं होता क्योंकि घुड़सवार सशस्त्र थे। इनके अलावा फीजीयन और युरोपियन पुलिस भी थी। इसके साथ कर्नल गोलडिंग की अपनी टुकड़ी भी थी।

भारतीयों ने आक्रमण नहीं किया था और इन से एक सश्स्त्र फोर्स को कोई खतरा नहीं हो सकता था। गोली कर्नल गोलडिंग के पूछे बिना चलाई गई थी। उन्हों ने अपनी सहायता के लिए सेना के टुकड़ी को भी नहीं बुलाया था क्योंकि उन्हें शायद अन्दाजा था कि निहत्थे लोग उसके लिए कोई खतरा नहीं बन सकते, फिर भी उन्हों ने अपने बचाव के लिए कहा कि यदि गोली ना चलाई जाती तो काफी क्षति हो सकती थी।

पुल की लड़ाई पर बी. डी. लक्ष्मण

पं. गुरुदयाल शर्मा का लिखा हुआ और श्री बी. डी. लक्ष्मण के अनुसार 'फीजी में गोली काँड-सामाबूला पुल की लड़ाई' नामक जो विवरण उपलब्ध है, वह इस प्रकार है:

> 'सूवा में जो घटनायें हुई थी, उन से भारतीय चिंतित थे। खासकर भारतीय स्त्रियों की बेइज्जती से उन्हें दुख हुआ था। वे सूवा जाकर सारी स्थिति देखना चाहते थे और सूवा के भारतीयों की मदद करना चाहते थे। उस विवरण के अनुसार श्री गोपाल साधू के नैतृत्व में दबुइलेबू की भीड़ सूवा की तरफ चल पड़ी थी। जब ये लोग होटेल के करीब पहूँचे तो पुलिस और सेना ने इनका रास्ता रोक लिया और पुलिस अधिकारियों ने गोपाल साधू से कहा कि वे लोगो से कहें कि वे अपने अपने डंडे फेंक दे और घर चले जाए।
>
> सब ने पुलिस की बात मान ली। जो भीड़ इकट्ठी थी, उस ने अपनी शाँति दर्शाते हुए डंडे फेंक दिए, लेकिन वे लौटे नहीं। जब गोपाल साधू ने कहा कि हम सूवा जाना चाहते है, आप रास्ता छोड़ दें तब मेजिस्ट्रेट ने अपने अफसरों से कुछ सल्लाह की और राष्ट्र-एक्ट यानि उपद्रव कानून पढ़ कर सुनाया। इस के बाद भी जब भारतीय नहीं हटे तब पुलिस पुल पर चढ़ी और दूसरी पार पहूँच गई। उनके आने पर भारतीय लोग भागे और दो सौ गज पीछे हट गए। तब मेजिस्ट्रेट पैन फादर ने पुलिस को हूक्म दिया कि आगे बढ़े। इसके बाद पुलिस और भारतीयों का संघर्ष शुरू हुआ। मजिस्ट्रेट पैन फादर ने गोली चलाने का हुक्म दिया और खुद गोपाल साधू पर गोली चलाई। साधू की छाती में दाहिनी तरफ

> ऊपर को गोली लगी तो वे लाठी के वार से अपनी रक्षा की जिस की चोट से जिम ब्रान और ग्राँट घायल हुए। पैन फादर ने दो गोलियाँ और चलाई जो गोपाल साधू के पीठ और छाती पर लगी। फिर उनके पैर में गोली लगी और वे गिर गए। जब धड़ा धड़ गोलियाँ चलने लगी और धड़ा धड़ भारतीय गिरने लगे, तब उन्हों ने भागना शुरू किया। पुलिस ने ४०० गज तक उनका पीछा किया। सैकड़ों के तादाद में वे घायल हो कर गिर गए और कुछ मरे। बाकी भारतीय भाग कर पहाड़ चढ़ कर दूसरी तरफ भाग गए।
>
> घायलों की पुकार से आसमान गूँज उठा। घायल वहीं पड़े रहे। उन को कोई उठाने वाला नहीं रहा। करीब आधे घंटे बाद जब सिपाहियों की मलहम पट्टी हो गई, तब इन को उठा कर पुलिस ने अस्पताल भेजा जिस में गोपाल साधू भी थे।'

इस विवरण से स्पष्ट है कि अगर पुलिस पुल के दूसरी तरफ द्वार बन्द किए जमी रहती तो सशस्त्र पुलिस के ऊपर भारतीय जिनके पास अधिक से अधिक लाठियाँ ही थी, आक्रमण नहीं करते। परन्तु युरोपियन लोग भारतीयों को आतंकित करना चाहते थे। वे अवसर ढूँढ़ रहे थे।

केफ्यु ओर्डर

उसी दिन सरकार ने यह आदेश दिया कि पाँच से ज्यादा व्यक्ति पुलिस इन्सपेक्टर की लिखित अनुमति के बिना घर में भी इकट्ठे नहीं हो सकते और पुलिस को अधिकार दिया गया कि वह घर में घुस कर ऐसे लोगों को गिरफ्तार करे या जबरदस्ती तितर बितर कर दे। इस आदेश को ना मानने पर एक सौ पौंड जुर्माना या एक साल की कैद या दोनों दन्ड दिए जा सकते थे। यह कानून केवल भारतीयों के लिए था। साथ में केफ्यु ओर्डर निकाला गया कि कोई भी भारतीय पुरूष या स्त्री बिना पास के छः बजे शाम से लेकर छः बजे सवेरे तक अपने घर से बाहर नहीं निकल सकते। इसके बाद गिरफ्तारियाँ हुई और मुकदमें चले। जिन लोगों को गिरफ्तार कर के ले जाया जाता था, उन्हें कड़ी धूप में बैठाया जाता था।

डा. मनीलाल को पुलिस ने अपने घर में नज़रबंद कर दिया था। 15 फरवरी १९२० को कोलोनियल सेक्रटरी नौसोरी गए जहाँ उन्होंने भारतीयों के

एक सभा में भाषण दिया और फिर भारतीय व्यापारियाँ को सूवा जाकर माल खरीदने की पेर्मिट दिये।

गर्वनर न सही, लेकिन उनका कोई प्रतिनिधि ही पहले नौसोरी जाते और वहाँ जाकर भारतीयों से मिल कर उन के सच्चे शिकायतों को सुनते तो इन दुर्घटनाओं की नौबत ही ना आती।

दूसरे दिन भारतीय काम पर आने लगे और गर्वनर महोदय की राय में हड़ताल दबा दी गई। उस रिपोर्ट में कहा गया कि हड़तालियों को कुछ ऐसा नहीं मिला जो उन्हें संवैधानिक तरीके से पेश आने पर नहीं मिलता। इस घटना के फल स्वरूप बहुत से लोगों पर मुकदमें चले। फौजदारी करने पर १६८ आदमी और १३ औरतें दण्डित हुई। ४० पुरूष और ५ स्त्रियों पर मुकदमें खारिज हो गए। परन्तु जमानत पर कोई नहीं छोड़ा गया। तार काटने के अपराध में दो व्यक्ति पकड़े गए। पुल तोड़ने के अपराध में २७ व्यक्ति गिरफ्तार हुए। इरादातन चोट पहुँचाने के अपराध में ८ पुरूष और ३ स्त्रियाँ गिरफ्तार हुई। कानून के खिलाफ इकट्ठा होने पर ८ व्यक्ति, बलवा करने पर १४ पुरूष और ३ स्त्रियाँ दौरा जज के सुपुर्द की गई। गोपाल साधू तथा ८ अन्य व्यक्तियों को धारा १४४ (144) तोड़ने के अपराध में एक एक साल की सजा दी गई। गुराई और मुहम्मद को पाँच पाँच वर्ष की सज़ा मिली, राम श्री और मोहम्मद को अट्ठारह महीनें की। नसीनू में पुल तोड़ने के अपराध में एक व्यक्ति को दो साल, ४ को डेढ़ साल, एक को एक साल, और १७ को छः महीने की सजा हुई। कुल मिला कर १९२ (192) व्यक्ति जेल भेज दिए गए।

वेतन और खर्च की जाँच

फीजी सरकार ने वेतन और खर्चे की जाँच के लिए एक आयोग की नियुक्ति की थी, जिसकी पहली बैठक ६ फरवरी १९२० को हुई। इसके अध्यक्ष थे श्री के. सी. यंग और सदस्य थे मि. बैक हाउस, डा. मोनटेग्यु, मि. एलिस, मि. चावला और पं. बद्री महाराज। इस आयोग की दो रिपोर्ट निकली। श्री संत सिंह चावला ने अपने रिपोर्ट में कहा कि रोजाना की मज़दूरी ४ शिलिंग या इस से ज्यादा हो जानी चाहिए। दूसरी तरफ गोरे सदस्यों और बदरी महाराज ने यह मत दिया कि जीवन खर्च में युद्ध के बाद ८६ (86) प्रतिशत की बृद्धि हुई है और सूवा में भारतीयों की मज़दूरी जो दो शिलिग चार पेनी है वह रहनी चाहिए। बाकी फीजी में मज़दूरी भले ही घटा दी जाए, लेकिन खाद्यन्न सस्ते

मिले। इसके लिए सहायता मिलनी चाहिए। परन्तु युरोपिये व्यापारियों के नेता श्री स्कोट ने मूल्य वृद्धि से इन्कार कर दिया।

१२ फरवरी को विधान परिषद् ने जो सुरक्षा के लिए विशेष कानून पास किया था, जिसे भारतीय लोग मार्शल लो कहते थे, वह सूवा, रेवा और नावुआ में तीन महीनों तक कायम रहा और कुछ समय के लिए नांदी में भी जारी किया गया।

सामाबूला की लड़ाई के बाद एक महीने से जो हड़ताल चल रही थी, वह समाप्त हो गई। मेजिस्ट्रेट ने मृत्यु के कारणों की जाँच की और यह कहा कि पुलिस या सेना की कारवाई के फल स्वरूप जो मृत्यु हुई न्यायोचित थी। गर्वनर सर सेसिल रोडवेल ने नेर्से और पुलिस फोर्स को उनकी तथा कथित बर्दास्तगी के लिए बधाई दी। उन्हों ने लिखा:

> 'तुराक, नौसोरी और सामाबूला पुल की तीनों घटनाओं में पुलिस के युरोपियन और फीजीयन सदस्यों तथा रक्षा सेनाओं ने जो आत्म नियंत्रण और बर्दास्तगी दिखाई है, मैं उसकी तारीफ किए बिना नहीं रह सकता।'

राजू रिपोर्ट और उनके बाद उन घटनाओं पर भारतीय लेखकों ने, जिन में डा. अहमद अली ने, जो घटना क्रम दिया है तथा उस समय के युरोपियन के क्या विचार थे और किस प्रकार उस बिचारधारा ने घटना क्रम को प्रभावित किया, उसे उपस्थित किया है। उन से लगता है कि जो मूलता आर्थिक प्रश्न के रूप में प्रकट हुआ, उसे अंग्रेज विरोधी राजनीतिक रूप दिया गया। इस में स्थानीय व्यापारियों, उद्योगपतियों, अंग्रेजी पत्र सम्पादकों और अंग्रेज अधिकारियों, सभी का हिस्सा था।

१०

हड़ताल का असली कारण

सूवा में हड़ताल का आरम्भ इस लिए हुआ कि पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेन्ट के आठ मज़दूरो ने, जिन में उनके दो सरदार भी थे, यह शिकायत की कि उन से ४५ (45) घंटे प्रति सप्ताह के स्थान पर ४८ (48) घंटे प्रति सप्ताह काम करने के लिए कहा गया और उन्हों ने काम करने से इन्कार कर दिया। उनका कहना था कि कुछ लोगों को पाँच मील से लेकर नौ मील दूर तक से आना पड़ता था। जब वे सवेरे चार बजे उठते थे, तब समय पर आ पाते थे। अगर उन्हें एक घंटा और काम करना पड़ा तो वे पूरी नींद भी नहीं सो सकते। लेकिन मुख्यता माँग आर्थिक थी। भारतीयों में यह माँग होने लगी थी कि मज़दूरी पाँच शिलिंग रोजाना होनी चाहिए। बाद में उन से पूछा गया कि वे क्यों हड़ताल पर है, तो इन मज़दूरों ने यह कहा कि उन्हें भर पेट खाने को नहीं मिलता। उन्हों ने साल भर की अपनी जरूरत की सूची बनाई, जो ५६ (56) पौड १६ शिलिंग ४ पेनी हुई यानि चार शिलिंग प्रति दिन का। जिन दो सरदारों ने मज़दूरों के साथ हड़ताल की थी, उन्हों ने कहा कि अगर उन्हें चार शिलिंग प्रति दिन दिया जाए, तो वे काम पर आने को तैयार हैं।

२० जनवरी को सरकारी अधिकारियों की एक व्यापारी से बात चीत हुई। उस ने कहा कि भारतीय जो चीजें खाते थे, उनका मूल्य २०० प्रतिशत से अधिक बढ़ गया था। वर्क्स डिपार्टमेन्ट के एक अधिकारी ने एक नोट बनाया जिस में उसने लिखा कि हड़ताल बढ़े हुए मूल्यों के विरूद्ध है। जितने प्रतिनिधि मंडल उनसे मिले हैं, सब ने यह शिकायत की है कि इस वेतन में उन का खर्च पूरा नहीं होता लेकिन कार्यवाहिक एजेन्ट जेनरल इमिग्रेशन मि. बैक हाउस यह मानने को तैयार नहीं थे कि रहन सहन का खर्च बढ़ गया है। युरोपियनों का साधारण-तया यही दृष्टिकोण था, हाँलाकि २४ जनवरी १९२० के फीजी टाइम्स ने लिखा था कि देश के मज़दूरों में जों असंतोष है उसका मुख्य कारण रहन सहन के खर्च में वृद्धि हैं। सरकार को पहला काम यह करना चाहिए कि खाद्यान्न की कीमतों पर विचार करे। खाद्यान्न की कीमतें इतनी बढ़ गई थी

कि इसके बारे में डा. अहमद अली के अनुसार गवर्नर महोदय के समक्ष स्थानीय पत्रों मे एक गोरे गन्ना मालिक की चिट्ठी की कतरन विचारार्थ पेश की गई थी। इस में कहा गया था कि भारतीयों को रोटी के लिए सफेद गेहूँ के आँटे का भाव जो किसी समय १२० पौंड के लिए १८ शिलिंग था, ३० शिलिंग तक बढ़ गया था। एक दूकान पर ३ पौंड आँटा ३ शिलिंग में मिलता था यानि १२० पौंड का भाव ८० शिलिंग हो चुका था। फीजी सरकार ने जो कमीशन नियुक्त किया था, उसके अध्यक्ष प्रधान न्यायाधीश एल्फ्रड कोर्न यंग थे। उन्हों ने और डा. मोनटेग्यु तथा श्री बैक हाउस ने बदरी महाराज के सहयोग से एक रिपोर्ट लिखी।

दूसरी रिपोर्ट श्री एस. एम. चवला ने लिखी थी और तीसरी रिपोर्ट युरोपियनों की थी, जिस में एक थे डब्ल्यु. एच. ब्रेवन्ट एक्टिंग।

रीसीवर-जेनरल और एक यूरोपियन वकील एच. ए. एलिस जो बहुमत की रिपोर्ट थी, उसे स्वीकार किया गया कि १९१३ में खाद्यान्न तथा अन्य जीवनयापन के लिए आवश्यक वस्तुओं का मूल्य 46 शिलिंग होता था, जो १९२० में ९५ शिलिंग प्रति मास हो गया था।

सन् १८५१ के भारतीय आब्रजन अध्यादेश के अनुसार भारतीय बन्दियों को खिलाने पर १९१३ में जो खर्च आता था, १९२२ में उस में ८८ प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी थी। इस में घी पर खर्च शामिल नहीं था। डा. मोनटेग्यु के अनुसार १९१४ में एक व्यक्ति के ऊपर खाने-पीने पर यदि प्रति सप्ताह ५ शिलिंग ५ पैसे खर्च होता था, १९२० में दस शिलिंग एक पैसे होने लगा। इस प्रकार ८४ प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। पर यह वृद्धि केवल खाद्यान्न की गिनी गई थी। कपड़े और बर्तनों में और अधिक हुई थी।

आयोग ने यह सिफारिश की कि प्रथम हजार टन चावल जो भारतीयों को दिया जाए, वह तीन पैसे प्रति पौंड के हिसाब से बेचा जाए और इसमें जो घाटा हो उसे सरकार सहन करे।

इसके अतिरिक्त चावल उगाने के लिए २० हजार पौंड की योजना सरकार बनाए जिस से फीजी में अधिक चावल उत्पन्न हो सके। ये सिफरिशें गर्वनर ने स्वीकार कर ली।

ब्रबेन्ट और एलिस ने जो रिपोर्ट लिखी, उस में यह तथ्य स्वीकार किया गया कि मूल्य बढ़ गए हैं परन्तु बढ़ी हुई मज़दूरी का विरोध किया और सिफारिश की कि भारतीय मज़दूरों को दूसरे काम कर के जैसे मुर्गी पालन आदि से अपनी आय बढ़ानी चाहिए।

श्री चावला की रिपोर्ट ही तथ्यों के साथ न्याय करती थी। उस में यह माँग थी कि चार शिलिंग प्रति दिन की मज़दूरी होनी चाहिए। सूवा में १६०६ से ले कर १६१६ तक मज़दूरी दो शिलिंग प्रति दिन रही और १६१६ में ही दो शिलिंग बढ़ी। रेवा में दो शिलिंग प्रति दिन की मज़दूरी बनी रही।

तुराकी घटना के लिए जिस में १५१ (151) भारतीय पुरूष और १२ महिलाओं को गिरफ्तार किया गया था और उन्हें कड़ी सजाये दी गई थी, एंथनी ग्रांट और रेवा के दोस्त मोहम्मद को गवाही देने के लिए बीस बीस पौंड का इनाम दिया गया था।

एक जेल यात्री और सामाबूला दल के नेता गोपाल साधू के अनुसार लाठी और गोली चार्ज में बीस लोग मरे थे जिन में एक मि. गाउन्डर भी था। लेकिन सरकार का रिपोर्ट था कि केवल एक व्यक्ति अस्पताल में जा कर मरा।

भारतीयों ने यह माँग की थी कि इन घटनाओं की कानूनी जाँच की जाए लेकिन ना-मंजूर कर दिया गया।

श्री बदरी महाराज की सहायता से १५/४/१६२० को डा. मनीलाल, श्रीमती मनीलाल, हरपाल महाराज, और फज़ल अहमद खाँ को फीजी से निकालने के लिए जहाज पर चढ़ा दिया गया। और बीस अप्रेल को यह जहाज न्युज़ीलेन्ड पहुँचा।

डा. मनीलाल और उनकी पत्नी को न्युज़ीलेन्ड में उतरने का मौका मिल गया लेकिन हरपाल महाराज और फज़ल अहमद खाँ को नहीं उतरने दिया गया। जब यह जहाज सिडनी पहूँचा, तो बहुत जाड़ा था। फज़ल अहमद खाँ के साथ बीस दिन की एक लड़की और दो लड़के, एक तीन और दूसरा साढ़े चार वर्ष का था। वे सब डेक पर बरसते पानी में भीगते रहे। उन्हें केवल तीन सूती कम्बल दिए गए थे और अस्ट्रेलिया और सिंगापुर की बन्दरगाहों में वे पुलिस के निगरानी में रहे। इस से अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि सारी ब्रिटिश सरकार उन्हें दुश्मन समझती थी।

हरपाल का अपराध यह था कि उन्हों ने २५/१२/१६१६ को सूवा की सभा में राष्ट्रीय गीत गाया था जिस से जनता प्रभावित हुई थी।

फज़ल अहमद खाँ नौसोरी जनता की अगवाई की थी। १६२ (192) भारतीयों को सजायें हुई थी। भारतीयों ने गन्ना नहीं काटा और सब खेतों ही में सड़ गया। नौसोरी के भगेलू ने एसी हालत में भारत से कोल्हू भी मंगाया गुढ़ बनाने के लिए पर फीजी में इस की माँग नहीं हुई।

रेंकिन डेपुटेशन

जब फीजी में यह हो रहा था तब उस समय भारत में पोलिनेशिया के विशप और कोलोनियल सेक्रेटरी मि. रेंकिन का एक डेपुटेशन भारत सरकार द्वारा मनोनित कमेटी से वार्ता करने आया था। उन्हों ने अपनी वार्ता में ६ तर्क दिये जो इस प्रकार है:

1. भारतीय मज़दूरों द्वारा अपनी एक तिहाई मज़दूरी फीजी में आसानी से बचाई जा सकती हैं।
2. फीजी के व्ययस्थापिका सभा में दो हिन्दुस्तानी सदस्य हिन्दुस्तानियों द्वारा ही चुने जाते हैं।
3. फीजी में शिक्षा के लिए ८,२०० पौंड सुरक्षित रखे गए हैं।
4. फीजी में भारतीयों को बड़े सुभीते से ज़मीन मिल जाती है और मिल सकेगी।
5. रेलवे ट्रेनों में भारतीयों और युरोपियनों के बीच कोई भेद भाव नहीं है जैसे दक्षिण अफ्रीका में हैं।
6. फीजी में जातीय भेद भाव नहीं है और कोई आशंका नहीं है कि भविष्य में जाति भेद भाव फैलेगा।

श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी और श्री निवास शास्त्री टिप्पणी की थी जिस के जवाब में डेपुटेशन बगलें झाँकने लगा था। १९२० में हिन्दुस्तानियों के प्रति गोरों को बहुत जलन था। उन्हों ने अपना पैपर फीजी टाइम्स के ११/२/१९२० के अंक में यह लिखा:

> Something must be done to put a stop to Indian women's stubborness. There is not a case of mere intimidation. They use cruel, filthy and hideous methods. They are not women, they are ghosts who ought to be goaled at once. They are too awful to be at large. Last night they hunted in packs, chasing 'boys' into their very homes. If any of them get seriously injured, no one could reasonably be blamed. This thirteenth century sort of business must be stopped.

डा. मनीलाल, श्री हरपाल और श्री फज़ल खाँ जब भारत पहूँचे तो महात्मा गाँधी को सब बतलाए।

११
अन्य जानकारियाँ

बदरी महाराज

बद्री दत्त बमोला जो बाद में बदरी महाराज हुए, गवर्नर सेसिल रोडवल के समय सन् १९१९ में फीजी में ज़मीन के समस्या को ले कर सरकार से टकराव किया था।

महात्मा गॉधी तथा कुछ एतिहासिक तिथियाँ

02/10/1869	को पोरबन्दर में जन्म हुआ।
1883	में कस्तूर बाई से विवाह हुआ।
10/6/1891	बैरिस्टर हुए
07/7/1891	बम्बई पहुँचे जहां माता जी की मृत्यु का समाचार मिला।
4/1893	मुकदमें के लिए दक्षिण अफ्रीका गए।
1894	मुकदमें का फैसला पन्च द्वारा हुआ।
1895	नैटाल सुप्रीम कोर्ट के एडवोकेट हुए।
1895	नैटाल भारतीय कॉंग्रेस का संगठन हुआ।
1896	छः महीने के लिए भारत आए और महात्मा तिलक, गोखले आदि नेताओं से भेंट हुई।
28/11/1897	डर्बन लौटने पर विरोधी प्रदर्शन जारी किया।
1897	बोअर युद्ध में अंग्रेजो की सहायता की।
1901	राजकोट में महामारी कमेटी द्वारा सेवा प्रदान की और इसी साल कलकत्ता कांग्रेस में शामिल हुए।
1906	जल विद्रोह के घायलों की सेवा, ब्रह्मचर्य रहने की प्रतिज्ञा, सत्याग्रह का आविष्कार, शिष्य मण्डल के सदस्य के तौर पर इंगलेन्ड तक का दौरा।
1907	खूनी कानून के विरुद्ध सत्याग्रह।

1908 से कई बार गिरफ्तार हुए।

1917 पहली बार राजेन्द्र बाबू से भेंट।

31/05/1917 गिरमिट कानून रद्द हुआ

13/04/1919 भारत का जलिया वाला बाग कांड जिस में प्रार्थना करते समय स्त्रियों और बच्चों पर अंग्रेजों ने गोली चलाई और जिस का बदला सुखदेव, भगत सिंह और राज गुरु दिए।

19/08/1920 गांधी जी का कांग्रेस संविधान स्वीकार किया गया।

19/08/1920 लोक मान्य तिलक की मृत्यु हुई। फीजी में इसकी सूचना साधू वशिष्ठ मुनि ने दी और वाइलाईलाई कुटी पर कुछ ब्राह्मणों को बुला कर तिलक महात्मा की श्राद्ध की गई। कहा जाता है कि तभी से साधू वशिष्ठ मुनि जटा, मूँछ, दाढ़ी मुड़ा दिए और इन का चित्र जटा समेत नहीं मिलते।

10/03/1922 गाँधी जी सत्याग्रह आन्दोलन में गिरफ्तार हुए और छ: वर्सो की सजा हुई।

1924 अपेंडिसाइटिस की आपरेशन हुई।

05/02/1924 जेल से रिहा हुए।

06/02/1931 मोतीलाल नेहरू की मृत्यु जेल में हो गई।

23/03/1931 भगत सिंह को फाँसी हुआ।

07/05/1934 सत्याग्रह स्थगित हुआ।

1938 सुभाष चन्द्र बोस ने कांग्रेस से इस्तिफा दी

03/09/1938 दूसरा महायुद्ध शुरू हुआ।

07/08/1941 दिवेन्द्रनाथ के पुत्र रवीन्द्रनाथ की मृत्यु हुई। इन्हों ने भारतीयों को उत्तेजित करने के लिए सभी राष्ट्रीय गीत लिखे थे और इन्हीं के प्रयास से मानव अधिकर का विकास हुआ।

08/08/1942 कांग्रेस के नैतृत्व में 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में सामूहिक रूप से भारत भर के नेताओं की गिरफतारियाँ हुई।

1945 नेताओं को जेल से छोड़ा गया।

15/08/1947 भारत को स्वत्रंता प्राप्त हुई।

31/01/1948 गाँधी जी नाथूराम के हाथ मारे गए। बापू जी के अन्तिम शब्द थे 'हे राम'।

ज्वाहर लाल नेहरू

श्री मोतीलाल नेहरू की पत्नी, स्वरूप रानी और पुत्र ज्वाहरलाल नेहरू थे। ये काशमीर के पहाड़ियों में रहते थे। सन् १७१६ ई. में नहर के किनारे दिल्ली में रहने लगे थे। मोतीलाल नेहरू के पिता का स्वर्गवास इनके पैदा होने से पहले हो चुका था। मोतीलाल नेहरू की देखभाल उनके बड़े भाई नन्दलाल ने की थी। ज्वाहरलाल नेहरू को घर के पुराने सदस्य मुबारक अली ने घर पर अरब की कहानियाँ और इतिहास बताया करते थे। २७/५/१९६४ को ज्वाहरलाल नेहरू की मृत्यु दिल्ली में हुई और इनका अन्तिम संस्कार यमुना नदी के किनारे राजघाट के समीप शान्तिवन में किया गया।

वशिष्ठ

प्राचीन साहित्य में कई वशिष्ठ के नाम मिलते है जैसे देवरात, मित्रावरूण, आपव और श्रेष्ठ भाज आदि। ये नाम उन्ही को दिया जाता था, जो रघुकुल के अपने समय के सब अच्छे ब्रह्मज्ञानी, सब से बड़े तपस्वी, विद्वान तथा धर्मशास्त्र के रचैता हुए। रघुकुल पूर्वज त्रिशंकु से हरिश्चन्द्र रोहित, हरित, खटवाँग, दीर्घबाहू, रघु, आज, दशरथ, राम और लव कुश के जमाने में भी वशिष्ठ ही उनके कुल गुरू थे। वशिष्ठ नाम उन्ही को दिया जाता था जो उस लायक होते थे, जैसे उपाधि दिया जाता है।

पं. तोताराम सनाढय

पं. तोताराम सनाढय की पत्नी गंगा देवी का देहान्त सन् १९३२ के मई महीने में हुआ था। इसके मरने के बाद, महात्मा गाँधी जी के बनाये हुए साबरमती आश्रम में पं. तोताराम सनाढय की सेवा भाई गुलाम रसूल कुरेशी की पत्नी और इमाम साहब की बहन ने की थी। ८/१/१९४८ हरिजन सेवक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी कि पं. तोताराम सनाढय की मृत्यु ६/१/१९४८ को साबरमती आश्रम में हुआ। इनके मरने के चौबीस दिन बाद ३०/१/१९४८ को नई दिल्ली बिरला मन्दिर के आश्रम में नाथूराम बिनायक गोडसे ने गोली मार कर महात्मा गाँधी जी की हत्या कर दी थी। ये दोनों पक्के देश भक्त और मित्र थे।

गोपाल कृष्ण और दीन बन्धु सी. एफ. एन्ड्रुज़

कहा जाता है कि गोपाल कृष्ण की मृत्यु सन् १६१५ में हुई थी और इनके अधूरे काम दीनबन्धु सी. एफ. एन्ड्रुज़ ने अपने हाथों में ले लिया था।

स्वामी विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्द जी के पिता विश्वनाथ दत्त वकील थे। विवेका नन्द जी का नाम नरेन्द्रनाथ था। सन् १८८६ में इन्हों ने घर त्याग कर श्री राम कृष्ण के चेला बन गए और तब से विवेकानन्द कहलाने लगे। इनका जन्म सन् १८६३ में कलकत्ता में हुआ था।

चित्र: हरनाथ जी अपने सुपुत्रों के साथ ... राकेश प्रकाश, रमेश प्रकाश, हरनाथ, रतन प्रकाश, दिनेश प्रकाश, धिरेन्द्र प्रकाश

Bank of New Zealand

1989 BNZ Canefarmer of the year award

This is to certify that

HARNATH

has been awarded
Sector Cane Farmer of the Year
for TAGI TAGI

Mr. K.K. Singh
Chief Executive

Mr. K.A. Ali
Chief Executive and
Managing Director
Fiji Sugar Corporation

हरनाथ जी का कृषिक पुरस्कार

श्रीमती और श्रीमान हरनाथ

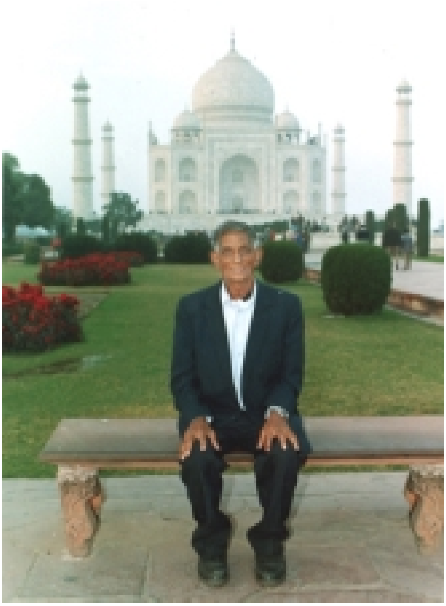

हरनाथ हिन्दुस्तान के दौरा पर ताज महल के आगे

बातिया के पहाड़ी खेत